हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकरका ७६ वाँ ग्रन्थ

व्यक्तित्व

अर्थात्

प्रभावशाली जीवन

और

उसकी प्राप्तिका मार्ग

9984

श्रीमती लिली एल० एलनके 'Personality: Its Cultivation and Power and How to Attain" नामक ग्रन्थका अनुवाद।

अनुवादकर्त्ता—

बाबू माईदयाल जैन, बी० ए० (आनर्स)

प्रकाशक—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

आश्विन, १९८८ वि०

अक्टूबर, सन् १९३१ ई०

पहली बार] [मूल्य बारह आने

प्रकाशक,
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, गिरगाँव—बम्बई

मुद्रक,
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
कांदेवाडी, बम्बई नं. ४

अनुवादकका वक्तव्य

हिन्दी-संसार सुप्रसिद्ध लेखक महात्मा जेम्स एलनके नामसे खूब परिचित है। क्यों कि उनकी बहुतसी पुस्तकोंका हिन्दी अनुवाद हो चुका है। उनकी पुस्तकोंमें कुछ ऐसा जादू है कि उनके पाठसे मृतप्राय आत्माओंमें भी जीवन आ जाता है और हतोत्साह आदमी भी उत्साही वीर बनकर कार्यक्षेत्रमें उतर आता है। यही कारण है कि उनका संसारकी समस्त उन्नत भाषाओंमें अनुवाद हो चुका है और युवक-संसारमें बड़ा सम्मान है। प्रस्तुत पुस्तक उन्हीं महात्माकी विदुषी धर्मपत्नी श्रीमती लिली एल० एलनकी प्रसिद्ध रचना 'Personality : Its Cultivation and Power and How to Attain' का अनुवाद है। इसे पढ़कर पाठक आश्चर्यके साथ देखेंगे कि श्रीमतीजीकी विद्वत्ता, विचारशीलता और लेखनपद्धति (Style) बिल्कुल अपने पतिके टक्करकी है। पाश्चात्य देशोंमे गुण-कर्म-स्वभावके अनुसार पति-पत्नीके चुनावकी जो पद्धति प्रचलित है, उसका यह एक उज्ज्वल पहलू है। जिस दिन भारतवर्षके लेखकों, कवियों, नेताओं तथा वैज्ञानिकोंकी धर्मपत्नियाँ भी उन्हींके अनुरूप होंगी, वह दिन भारतके लिए धन्य होगा। खैर, यह तो विषयान्तरकी बात हुई।

प्रस्तुत पुस्तकका विषय कितना उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है, इसको मूल लेखिकाके ये वाक्य अच्छी तरह प्रकट करते हैं—"व्यक्तित्व ही समस्त सफलताओंका आधार है; बल्कि हमें कहना चाहिए कि समस्त सफलताओंका मूल ही यह है। हम प्रत्येक स्थानपर देखते हैं कि व्यक्तित्वयुक्त स्त्री-पुरुष ही धन, उपाधियाँ, कुलीनता और यश प्राप्त करते हैं। शक्ति और प्रभावको सूचित करनेवाली प्रत्येक वस्तु व्यक्तित्वके सामने झुक जाती है। व्यक्तित्वके दिनका अभी सुप्रभात ही है। उन स्त्री-पुरुषोंको अवश्य ही व्यक्तित्व प्राप्त करना होगा, या यों कहो कि अपने जीवनको प्रभावशाली बनाना होगा, जो कि भविष्यमें अपने साथियोंके वास्ते लाभदायक होना चाहेंगे और जो शक्तिसूचक, प्रभावशाली और महान् पदोंको ग्रहण करेंगे।"

प्रकृतिका यह अटल नियम है कि जैसी जिसकी भावना होती है, वह वैसा ही बन जाता है। ऐसा क्यों होता है, इसका विस्तृत विवरण इस पुस्तकमें मिलेगा। इसके पाठसे विदेशोंके लाखों नवयुवक अपनी मनोकामनाओंको पूरा करनेमें समर्थ हुए हैं। हमारे देशके नवयुवक भी अपनी सर्वांग उन्नति कर सकें और अपने जीवनको प्रभावशाली बना सकें, इसी उच्च भावनासे यह अनुवाद किया गया है।

पुस्तकके दो खण्ड हैं। प्रथम खण्डमें व्यक्तित्वकी व्याख्या, उसका महत्त्व, प्रभाव, तथा उसके आवश्यक पहलू बताये गये हैं और दूसरे खण्डमें व्यक्तित्व-प्राप्तिका या प्रभावशाली जीवन बनानेका मार्ग प्रदर्शित किया गया है।

अनुवाद यद्यपि स्वतंत्रताके साथ किया गया है, परन्तु बड़ी सावधानीसे। मूलके भावोंकी रक्षाका पूरा ध्यान रखा गया है। इसमें मुझे कहाँ तक सफलता हुई है, इसे तो वही विद्वान् बता सकेंगे, जो इसको मूल पुस्तकके साथ पढ़ेंगे। इस पुस्तकके अनुवादमें पण्डित नाथूरामजी प्रेमीकी सम्मतियोंसे मुझे अत्यंत अधिक सहायता मिली है। भाषाका संशोधन भी उन्होंने किया है, जिसके लिए मैं उनका बहुत आभारी हूँ। इस पुस्तकको पाठकोंके सामने लानेका श्रेय प्रेमीजीके अतिरिक्त यदि किसी दूसरे व्यक्तिको दिया जा सकता है, तो वह भाई अजितप्रसादजी जैन बी० ए० को, क्यों कि उनकी ही प्रेरणाका यह फल है। यदि पाठक पाठिकाओंने इस पुस्तकसे लाभ उठाया, तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूँगा।

कबाड़ी बाजार, अम्बाला छावनी
१७ अक्टूबर, १९३१

—माईदयाल जैन

विषय-सूची

प्रथम खण्ड

		पृष्ठसंख्या
१	व्यक्तित्व	१
२	सम्यग्विश्वास	९
३	आत्म-ज्ञान	१५
४	श्रुति-ज्ञान	२१
५	निश्चय और तत्परता ...	२७
६	आत्म-विश्वास	३२
७	परिगामिता	३८
८	सद्व्यवहार	४२
९	शारीरिक संस्कार	४७
१०	मानसिक संस्कार	५४
११	नैतिक संस्कार	६२
१२	आध्यात्मिक संस्कार ...	६७

द्वितीय खण्ड

१	आत्मानुवीक्षण	७८
२	मुक्ति	८५
३	आत्म-विकास	९०
४	आत्म-संयम और मानसिक समता	९६
५	स्वतंत्रता	१०२
६	परिवर्तन	१०७
७	समतोलता	११२
८	मनन और ध्यान	११५

समर्पण

स्वर्गीय लाला रतनलालजी जैन, सोनीपत,

परम मित्र,

आपका प्रकट तथा अप्रकट रूपसे जो प्रभाव मुझपर पड़ा है, उसे लिखना अत्यन्त कठिन है। मुझे यह स्वीकार करनेमें जरा भी संकोच नहीं है कि आपकी दस बारह वर्षकी संगतिसे मैंने बहुत कुछ प्राप्त किया है। इस पुस्तकके अनुवाद करनेमें भी आप एक बड़े कारण थे; परन्तु शोक है कि आप इसको साहित्य-संसारमें नहीं देख सके, इसके प्रकाशित होनेसे पहले ही हमसे जुदा हो गये। अतः आपके 'प्रभावशाली जीवन' की पवित्र स्मृतिमें यह साधारण सी भेंट बड़ी श्रद्धाके साथ समर्पित है।

आपका—

माईदयाल

प्रारंभिक कथन

बहुत समय तक हम द्वार द्वारके भिखारी रह चुके हैं और असत्यको ही भ्रमसे सत्य समझकर उसपर विश्वास करते रहे हैं। हम तो राजाओंके भी अधिराज परमात्माकी सन्तान—राजकुमार और राजकुमारियाँ—हैं। अब हम दर दरकी भिक्षा न माँगेंगे। न झुक-झुककर दास-भावसे प्रणाम करेंगे और न किसीसे प्रार्थना करेंगे। अब हम अपने उन परमात्मीय गुणोंमें प्रवेश करेंगे, जो कि हमारी पैतृक सम्पत्ति हैं। आओ, हमारे सामने स्वर्गका दरवाजा खुला हुआ है। फिर हम दरवाजेपर ही क्यों खड़े रहें? जब स्वयं परमात्मा हमें निमंत्रण देता है, तब हम बाहर क्यों पड़े रहें? हमें जीवनके वास्ते ही नहीं, वरन् अत्यंत अधिक विशाल जीवनके वास्ते पुकारा जाता है। मेरी यही धार्मिक भावना है कि यह पुस्तक महान् पथके भटकते हुए पथिकोंको उनकी समस्त वास्तविक सत्ताओंका पूर्ण अनुभव करानेमें, तथा उन्हें यह बोध करानेमें कि संसारमें वे क्या बन सकते हैं, एक पथप्रदर्शक प्रकाशका काम दे।

—लिली एल० एलन

प्रभावशाली जीवन

प्रथम खण्ड

१—व्यक्तित्व

"त्रुटिपूर्ण व्यक्तित्व हरएक स्थानपर हानिकारक होता है।"

—निट्शे।

व्यक्तित्वकी शक्ति और महत्ताके विषयमें जितना भी कहा जाय, थोड़ा है। यह सारी सफलताओंका आधार और सारी सफलताओंकी जड़ है। स्त्रियों और पुरुषोंको आप संसारके किसी भी क्षेत्रमें देखिए, व्यक्तित्वके बिना वे प्रत्येक स्थानपर असफल होते हैं। उनकी मनोकामनाएं पूरी नहीं होतीं। फिर यह कितने आश्चर्यकी बात है कि हम अपने व्यक्तित्वको समझनेकी परवा ही नहीं करते, इस ओर ध्यान ही नहीं देते। माता-पिता अपने बच्चोंकी शिक्षापर खूब धन लुटाते हैं, किन्तु क्या उन्होंने कभी इस बातको सोचनेकी चिन्ता भी की है कि जिसे वे लोग शिक्षा समझते हैं, वह वास्तवमें क्या वस्तु है? यदि ज़रा भी गहरी दृष्टिसे देखा जाय और कुछ विचार किया जाय, तो मालूम होगा कि बच्चों और नवयुवकोंको ऐसी ऐसी बातें रटा देना ही आजकलकी शिक्षा है, जिनका आदमीके अमली जीवनसे या तो बिल्कुल ही सम्बन्ध नहीं होता अथवा बहुत ही कम होता है। कभी कभी तो यह भी देखा गया है कि इस शिक्षाके देते

समय बच्चोंके व्यक्तित्वके चिह्नोंको ही दबा दिया जाता है और उन्हें कृत्रिम सहायताओं, परावलम्बनों और निर्बल सहारोंके भरोसे पीछे फेंक दिया जाता है। बच्चोंको आरम्भसे ही इस प्रकार जकड़ दिया जाता है और इस प्रकारके शब्द हर समय उनसे कहे जाते हैं, जिससे उनकी शक्तियोंका पूर्ण रूपसे विकाश ही नहीं होने पाता है। इस प्रकारका व्यवहार बच्चोंकी आत्माओंके उस भागको नष्ट कर देता है, जिसे व्यक्तित्व कहा जा सकता है। जिस प्रकार एक मूर्ख माली किसी पौधेको हर समय काट-काटकर उसे बढ़ने नहीं देता है, उसी प्रकार यदि दूसरे आदमियोंद्वारा बच्चोंका हर समय विरोध हो और उन्हें अपनी आन्तरिक न्याय-बुद्धिको व्यवहारमें लाने तथा विकसित करनेका अवसर न दिया जाय, तो उनके लिए दुर्बल तथा परावलम्बीके सिवाय और कुछ बनना असम्भव है। इस ढँगसे बच्चोंके आरंभिक अधिकारोंका गला घोंट दिया जाता है, कलियोंको खिलनेसे पहले ही तोड़-मरोड़कर मिट्टीमें मिला दिया जाता है और बच्चोंका व्यक्तित्व त्रुटिपूर्ण और दुर्बल बना दिया जाता है। जिन बच्चोंको 'हौवा' 'भूत-प्रेत' और 'बाबाजी' का डर हर घड़ी दिखाया जाता है और जिनके सिरपर धमकी और मारका भूत हर समय सवार रहता है, वे क्या शूर-वीर बनेंगे? नये नये कामोंमें हाथ डालनेका वे क्या साहस करेंगे? यद्यपि इस महान् पापके लिए बच्चोंके माता-पिता सदा उत्तरदायी नहीं होते; फिर भी छोटे छोटे बच्चोंको प्रभावशाली तथा शक्तिसम्पन्न न बनाकर आरम्भमें ही उनको जीवनीशक्तिसे वञ्चित करना, उनकी सर्वाङ्ग उन्नत्ति न होने देना और उन्हें दुर्बल तथा शक्तिहीन बनाना पाप तो है ही।

बालकोंकी आन्तरिक न्याय-बुद्धिका किस प्रकार नाश हो जाता है और फिर वह किस प्रकार पुनरुज्जीवित हो सकती है, इस बातको निम्नलिखित घटनाद्वारा स्पष्ट रूपसे समझा जा सकता है। एक बच्चा था। उसके माता पिता इस बातको जानते थे कि

बच्चेके हृदयमें सिद्धान्तोंको समझनेकी शक्ति पूर्णतया विद्यमान होती है और यदि बच्चेको अपनी न्याय-बुद्धिको व्यवहारमें लानेका अवसर दिया जाय, तो वह स्वभावसे अपने हित-अहितकी बात अच्छी तरह सोच सकता है। इस लिए वे दोनों बाल्यावस्थासे ही अपने बच्चेके आन्तरिक गुणों और शक्तियोंको प्रोत्साहित करते, उत्तेजना देते, और बढ़ानेका प्रयत्न करते थे। ऐसे प्रयत्नका जो फल होना चाहिए था, वही हुआ। सात वर्षकी छोटीसी ही आयुमें उस बच्चेका व्यक्तित्व दृढ हो गया। वह बिना किसी झिझक, आनाकानी और दलीलके दृढ निश्चयपूर्वक 'न' और 'हाँ' कहता था। उसके माता-पिता उसके फ़ैसले, निश्चय, का सदा आदर करते थे और उसको स्वीकार करते थे। इसके बाद वह स्कूलमें भरती किया गया, परन्तु वहाँ जाते अभी थोड़े ही दिन हुए थे कि उससे उसकी बिना झिझकके निश्चय करनेकी वह अपूर्व शक्ति विदा होने लगी। उसकी सुन्दर और स्पष्ट विचार-शक्ति मन्द पड़ गई, मानो उसपर बादल छा गये। सहज सहज उसके मुखसे वे निश्चित 'न' और 'हाँ' निकलने बन्द हो गये, जिनकी सब आदमी प्रशंसा किया करते थे। बात यहीं समाप्त नहीं हुई। उसकी आत्मा गिरने लगी, निश्चय स्थिर करते समय उसके मनमें झिझक प्रकट होने लगी और स्वयं उसे अपने निश्चयोंकी सत्यताके विषयमें सन्देह होने लगा। सचमुच यह एक बड़ा भारी दुर्भाग्य था और उसके माता-पिता भी इसे दुर्भाग्य ही समझते थे। जिस समय वह बच्चा घरपर होता था, उस समय वे उसको अपने निश्चयपर दृढ रहने और हर बातमें स्वयं सोचनेके वास्ते प्रोत्साहित करके उसके इस भयंकर पतनको रोकनेका प्रयत्न करते थे। वे केवल कर भी यही सकते थे। सौभाग्यसे बचपनके संस्कारोंने उसके मनपर इतनी गहरी छाप लगा दी थी कि स्कूल छोड़नेके बाद शीघ्र ही उसके मनपरसे परावलम्बन, आत्म-सन्देह और अपने निश्चयोंमें अविश्वासके भाव मिटने लगे। उसने अपना व्यक्तित्व फिरसे प्राप्त कर लिया।

उसके माता-पिता उसके उन दृढ निश्चयोंको सुनकर प्रसन्न होते थे, जिनसे आत्माका प्रभुत्व स्पष्ट प्रकट होता है।

यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि व्यक्तित्व क्या है। इसके विषयमें हमारे मनमें कोई सन्देह न रहना चाहिए। अभिमान, दुराग्रह, और घमण्डसे चिल्लाना व्यक्तित्व नहीं है। मूर्खतासे मनको वशमें रखना, बिना विचारे चाहे जो कह देना, अक्खड़ता और उच्छृंखलताका नाम भी व्यक्तित्व नहीं है। अति-साहसी तथा अतिआत्मविश्वासी बालक अथवा युवक या युवती सच्चे व्यक्तित्वके सिवाय किसी दूसरी ही वस्तुके द्योतक हैं। ये तो हरएक काममें टाँग अड़ानेवालोंके अज्ञान और उनके निकृष्ट संस्कारोंके द्योतक होते हैं। सम्भवतया यदि बच्चोंको उनकी अपनी ही समझपर छोड़ दिया जाय, तो उनमें ये बातें अपेक्षा-कृत कम ही होंगी, कारण कि अल्पकालिक अतिसाहसी, आक्र-मणकारी, तथा बातूनी बच्चोंपर न तो कोई प्रेम ही करता है और न कोई आदमी उनकी प्रशंसा ही करता है। विकाशमान व्यक्ति-त्वको प्रकट करनेवाले कुछ गुण होते हैं, और उनका अभाव व्यक्तित्वकी कमीका सच्चा द्योतक है। व्यक्तित्वके अभावको प्रकट करनेवाले प्रधान अवगुण हठ, बड़ोंका अनादर, माता पिताकी उचित तथा हार्दिक इच्छाओंका उल्लंघन और अहम्मन्यता आत्म-विश्वासके सर्वथा विरुद्ध हैं। व्यक्तित्व-युक्त आदमीके लिए अपने व्यक्तित्वको दूसरोंको दिखानेकी आवश्यकता नहीं है। व्यक्तित्व जहाँ कहीं होता है, वहाँ यह स्वयमेव ही प्रकट हो जाता है, और इसके अप्रकट प्रभावको सब ही अनुभव कर लेते हैं तथा स्वीकार कर लेते हैं। उसको अधिक बोलने, अथवा दूसरोंपर अपना प्रभाव जमाने तथा अपने महत्त्वको अंकित करनेका प्रयत्न करनेकी भी कोई आवश्यकता नहीं है। कारण कि वह अपने प्रभावशाली मौनके द्वारा ही वे सब बातें कह देता है जो कि समस्त अवस्थाओं तथा समस्त परिस्थितियोंमें अपने आपको संतुष्ट और ठीक प्रमाणित करनेके वास्ते उसके लिए आवश्यक

हैं। वह अपने कार्य-मार्ग तथा इच्छाकी चिन्ता ही नहीं करता, क्यों कि वह स्वयं अपनी इच्छाका स्वामी और अपने मार्गका निर्माता है। अपने सुख, आराम और सम्भोगोंको पूर्णतया भूल कर वह अपने स्वभाव तथा प्रकृतिसे उन आदमियोंको सुख और विश्वास, तथा शक्ति और वैभव प्रदान करता है, जो कि उसके सम्पर्कमें आते हैं। वह अपने बड़ोंका कितना आदर करता है और कितने प्रेम तथा पूर्णताके साथ वह अपने माता-पिता, मित्रों तथा साथियोंके सुख और आनन्दके वास्ते अपने आपको न्यौछावर करता है! और सब ही आदमी समस्त विभागोंमें उसकी इस महती शक्तिको कितनी शीघ्रताके साथ स्वीकार कर लेते हैं!

एक बार दो कुशल गवैयोंने किसी प्रसिद्ध गान-मण्डलीमें किसी पदके वास्ते प्रार्थनापत्र भेजे। उनमेंसे एक दुर्बल शकल-सूरतवाला तथा हाव-भावसे जनाना और प्रभावहीन था। वह व्यक्तित्वहीन था। जब वह गान-मञ्च या स्टेजपर आया, तब मालूम हुआ कि उसकी आवाज़ तो अच्छी है, किन्तु उसमें कोई मोहिनी शक्ति और प्रभाव नहीं है। दूसरे आदमीकी आवाज़ और स्वर हलके थे तथा उनमें उतना रस भी न था; किन्तु वह अच्छा व्यक्तित्व रखता था। यद्यपि उसके शरीरकी रचना अच्छी न थी, तथापि उसके प्रत्येक कदम और चालमें गम्भीरता, वजन और आत्माधिकार था। उसकी दृष्टि पड़ते ही दर्शकगण उसके प्रभावमें आ गये और उनको उसके आत्म-विश्वासका बोध हो गया। वह व्यक्तित्वयुक्त आदमी था। उसने वह पद शीघ्र ही प्राप्त कर लिया; परन्तु सुरीली आवाजवाले किन्तु व्यक्तित्व-हीन पहले आदमीको वहाँसे निराश लौटना पड़ा। अतएव यह ठीक है कि "त्रुटिपूर्ण व्यक्तित्व हरएक स्थानपर हानिकारक होता है।"

हम अपने जीवनमें प्रतिदिन ही देखते हैं कि सभा-सुसाइटियोंके प्लेटफार्मोंपर एक दुबला पतला और मन्द आवाजवाला व्याख्यानदाता सब श्रोताओंको अपने वशमें कर लेता है, और खूब ज़ोर ज़ोरसे व्याख्यान देनेवालोंको इसमें कोई सफलता प्राप्त नहीं

होती। बहुतसे वकीलोंकी शकल देखते ही हाकिम उनके प्रभावमें आ जाते हैं और वकीलके पक्षमें फैसला दे देते हैं; परन्तु दूसरे वकील कानूनी पोथियोंके हवाले देते देते तथा चिल्लाते चिल्लाते थक जाते हैं, किन्तु हाकिमपर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता और वे विरुद्ध फैसला दे देते हैं। प्रत्येक स्थानपर प्रभावशाली तथा व्यक्तित्व-युक्त पुरुषों और स्त्रियोंको ही सफलता मिलती है, दूसरोंको नहीं।

बहुतसे बड़े और प्रतिष्ठित स्त्री पुरुषोंके सामने जाते ही आदमी घबड़ा जाता है। घरसे जो कुछ सोचकर आता है, उसका आधा भी ठीक रूपसे उनके सामने नहीं कह सकता। कारण यही है कि वे स्त्री-पुरुष प्रभावशाली होते हैं और आगन्तुक लोग उनके प्रभावसे दब जाते हैं। कई बार हम सुनते भी हैं कि अमुक पुरुष रौबवाला तथा प्रभावशाली है। धन, उपाधि, उच्चजन्म, प्रसिद्धि और दूसरी ऐसी वस्तुएँ व्यक्तित्वके सामने नहीं ठहर सकतीं, जिनको शक्तिसम्पन्न तथा प्रभावशाली बनानेवाला समझा जाता है। व्यक्तित्व इन सबसे बड़ा है। मध्यकालमें धनी आदमी शक्ति-सम्पन्न समझे जाते होंगे। वास्तवमें अबसे कुछ ही पहले धन-बलको सभी मानते थे; परन्तु एक समय आया जब कि लोगोंने धनको विशेष सम्मान तथा महत्त्वकी वस्तु नहीं समझा। उसे साधारण तथा तुच्छ वस्तु समझकर ठुकरा दिया। फिर विद्वत्ता-का युग आया, और विद्वत्ताकी पूजा होने लगी। जो आदमी दूसरे आदमियों और दूसरी वस्तुओंके विषयमें अधिक बातें जानता था, वह धनिक आदमीसे भी ज़ियादा बलवान् समझा जाने लगा। लोग ज्ञानको ही शक्ति कहने लगे। (Knowledge is Power.) अब कुछ समयसे ज्ञान-बलके स्थानपर वास्तविक शिक्षाकी मानता होने लगी है। निस्सन्देह जिस आदमीके पास बहुतसी डिगरियाँ हैं और जो आदमी कालेजोंके चिह्नरूप वस्त्र पहने हुए है, वह सम्मानके योग्य है। किन्तु बहुतसी उपा-धियों-डिगरियोंके होनेपर भी यह सम्भव है कि वह आदमी

शिक्षाके वास्तविक अर्थोंमें शिक्षित न हों। कारण कि विद्वत्ता-प्राप्ति और बहुतसी परीक्षाओंको पास कर लेनेका अर्थ सदा सत्-शिक्षा और सुसंस्कार नहीं होता। किन्तु अब तो ज्ञान-बल भी व्यक्तित्वके बलके वास्ते स्थान छोड़ता जा रहा है। अब तो व्यक्तित्वयुक्त पुरुष और स्त्रियाँ ही संसारमें महान् शक्तिशाली हैं। यह इसका आरम्भ मात्र है, इसका यह प्रभात ही है। जो स्त्री-पुरुष अपने साथियोंके वास्ते उपयोगी होना चाहते हैं, जो भविष्यमें महान्, प्रभावशाली और प्रतिष्ठित पदोंपर पहुँचना चाहते हैं, उन्हें निश्चयसे अपने व्यक्तित्वको दृढ करना होगा, व्यक्तित्वको बनाना होगा।

इस अद्भुत शक्तिको सभी आदमी समान रूपसे प्राप्त कर सकते हैं। यह किसीके देनेसे प्राप्त नहीं होती। इसे प्रदान भी कौन कर सकता है? यह बाज़ारसे खरीदी भी नहीं जा सकती। व्यक्तित्व कुछ बड़े बड़े आदमियोंका ही अधिकार नहीं है, उनकी पैतृक सम्पत्ति या मौरूसी जायदाद नहीं है। किसीके नाम इसका पट्टा भी नहीं लिखा हुआ है। यदि आज कुछ आदमी दूसरे आद-मियोंसे अपेक्षाकृत अधिक व्यक्तित्व-युक्त हैं, तो इसका यही अर्थ है कि उन्होंने पूर्व जन्ममें इसकी प्राप्तिके वास्ते अधिक प्रयत्न किया है। जो आदमी इसको प्राप्त करते हैं, उन सबका इसपर समान अधिकार है। जिस बच्चेके माता-पिता व्यक्तित्वके महत्त्व तथा मूल्यको समझते हैं और अपने बच्चेके व्यक्तित्वके विकासकी ओर उसकी बाल्यावस्थासे ही समुचित ध्यान देते हैं, सचमुच उस बच्चेका जन्म धन्य है।

जिन आदमियोंको बाल्यकालमें व्यक्तित्वप्राप्ति तथा उसको विकसित करनेके सुभीते प्राप्त न थे, अब यदि उनकी युवावस्था भी ढल चुकी हो, तो भी उन्हें यह समझनेकी आवश्यकता नहीं है कि अब उनके लिए व्यक्तित्व प्राप्त करनेमें देर हो गई है, उसका समय निकल गया है। व्यक्तित्वकी महती शक्तिके बिना अपने जीवनमें बहुत आदमी पीछे रह गये हैं और बहुतसे संसारकी

रंगभूमिमें विफल-मनोरथ हो गये हैं। क्या आप भी उनमेंसे एक हैं? नहीं, आपको ऐसा न रहना चाहिए। यदि आप व्यक्तित्व-प्राप्तिकी तीव्र इच्छा करें, तो आप भी इस शक्तिको पा सकते हैं। अब भी आपके जीवनका अन्तिम भाग दृढ और सुन्दर बन सकता है। यदि भूतकालमें आप इस महती शक्तिके अभावसे असफल होते रहे हैं, यदि आपको अपने त्रुटिपूर्ण व्यक्तित्वके कारण हानियाँ उठानी पड़ी हैं, तो भी आपके लिए अब यही उचित तथा उपयोगी है कि आप प्रयत्न करके उस वस्तुको प्राप्त कर लें, जिसका आपके जीवनमें अभाव था, जिसके बिना जीवन-पथमें दूसरे आदमियोंको अपनेसे आगे निकलता देखते हुए भी आप सबसे पीछे रह गये, जिसके अभावसे आप अपनी मनोवांछित वस्तुओंको प्राप्त नहीं कर सके, जब कि दूसरे आदमी आपके सामने ही उनको प्राप्त कर गये।

जब हम यह बात याद करते हैं कि मानव-जीवन कुछ साठ-सत्तर वर्षोंमें ही परिमित नहीं है, यह जीवन बहुतसे जीवनोंमेंसे एक है और नवीन जीवन सदा वहाँसे आरम्भ होता है, जहाँ प्राचीन जीवन समाप्त होता है, तब हम यह जानते हैं कि यदि हम अपने जीवन-पथके अन्तिम भागपर भी पहुँच गये हैं, बिलकुल वृद्ध हो गये हैं, तब भी यही अच्छा है कि हम व्यक्तित्व-प्राप्तिका प्रयत्न करें। कारण कि इससे हम अपने नवीन जीवनमें बहुतसे सुभीतोंके साथ प्रवेश करेंगे, जिनके लिए इस जीवनमें हमारे हृदय लालायित रहे थे किन्तु जिन्हें हम न पा सके थे।

२—सम्यग्विश्वास

"मैं समस्त भूमण्डल, सप्त नक्षत्रों, सौर वर्ष, सीजर (रोमके बली राजा) के बाहु-बल, प्लेटोके मस्तिष्क, महात्मा ईसाके हृदय और शेक्सपीयरके कवित्वका स्वामी हूँ।"

—इमर्सन।

"मैं आत्माकी सिद्धिके मार्गपर जा रहा हूं। मैं अपने उस मार्गको जिसपर कोई पद-चिह्न नहीं है पक्षीके समान देखता हूं। मैं वहां अवश्य पहुँचूँगा।"

—ब्राऊनिंग।

यह बात यहाँ फिर दोहरा देनी अवश्यक मालूम होती है कि व्यक्तित्वको कोई दूसरा आदमी नहीं देता और न यह कुछ बड़े बड़े आदमियोंकी मौरूस है। जो आदमी इसकी प्राप्तिका प्रयत्न करते हैं, इसपर उन सभीका समान अधिकार है। इसको सभी आदमी प्राप्त कर सकते हैं। किसी पुरुष या स्त्रीका, चाहे किसी उच्च कुलमें जन्म हुआ हो, चाहे नीच कुलमें, चाहे उसके माता पिता अमीर हों या गरीब, समुन्नत्त हों या पतित, उसके लिए व्यक्तित्वके मार्गमें ये बातें कुछ विशेष अर्थ नहीं रखतीं। हरएक आदमी अपने ही पैरोंपर खड़ा है। उसका अपना जीवन है, जिसे वह स्वयं ही बनाता है और स्वयं ही व्यतीत करता है। उसका जीवन स्वयं उसके ही हाथोंमें है और उसका विधाता भी वह स्वयं ही है। इस महान् मूर्खतापूर्ण अंध-विश्वासको मनुष्य-समाज न जाने कब छोड़ेगा कि अपराधियोंके स्थानपर निर्दोष आदमी दुख पाते हैं। लोग इस गिरानेवाले विचारसे न जाने कब अपना पीछा छुड़ायेंगे कि आदमी वंश, बाह्य परिस्थितियों और इसी प्रकारकी दूसरी अवस्थाओंके अधीन होता है, उनका दास होता है। वास्तवमें अब तो वह समय आ गया है कि जब सभी विचार-शील और बुद्धिमान आदमियोंको ऊपराऊपरी विचार छोड़कर गम्भीरताके साथ गहरा सोचना चाहिए और जीवन तथा न्याय-

की तह तक पहुँचना चाहिए। इसी सत्यको एक कविने निम्न-लिखित सुन्दर शब्दोंमें प्रकट किया है:—

"आप पिछली बातोंके उपासक हैं। आपने जातियोंके पूर्वजीवनकी बाह्य स्थितिको देखा है तथा आदमीको राजनीति, जनता, अधिकारियों और धर्म्माचार्योंका अनुगामी समझा है, उनकी रचना समझा है। किन्तु मैंने उसे उसकी वास्तविक अवस्थामें अपने अधिकारोंपर चलते देखा है। मैं तो आत्म-गौरवको अनुभव करता हुआ व्यक्तित्वका राग अलापता हूँ और अपनी भावी स्कीमोंको सोचता हुआ आगामी इतिहासकी रचना करता हूँ। *"

क्या आपको इस बातपर विश्वास है कि मनुष्य अपने भाग्य-का स्वामी और अपने जीवनका राजा है? यदि आप ऐसा विश्वास नहीं करते, यदि आप यह विश्वास रखते हैं कि आप संसारके एक क्षुद्र जीव अथवा अभागे पापी हैं, यदि आप अपनेको परिस्थितियों, वंश, बाह्य अवस्थाओं, अस्वास्थ्य तथा सहस्रों अन्य हार्दिक दुष्कल्पनाओंका दास समझते हैं, तो यह पुस्तक आपके लिए अधिक उपयोगी न होगी। क्योंकि प्रत्येक आदमी वैसा ही होता है, जैसे कि उसके विचार होते हैं।

व्यक्तित्व-प्राप्तिका प्रश्न हरएक आदमीके वास्ते व्यक्तिगत सवाल है। इसका किसी दूसरे आदमीसे सम्बन्ध नहीं है। दूसरा कोई भी आदमी आपके मन तथा व्यक्तित्वको बलवान् और दृढ नहीं बना सकता। कोई आदमी आपको दुर्बलसे शक्तिसम्पन्न, असफलसे सफल और 'कुछ नहीं' से 'सब कुछ' नहीं बना सकता। आप स्वयं ही सब कुछ बन सकते हैं, और आपमें सब कुछ करनेकी शक्ति मौजूद है। आप इस बातकी जरा भी चिन्ता न करें कि आप अब क्या हैं। यदि आप केवल अपने आपमें विश्वास रक्खें और इस पुस्तकमें बताई हुई बातोंपर चलें, तो आपका भविष्य आपकी इच्छानुकूल बन सकता है।

* वाल्ट व्हिटमैनकी "Leaves of Grass"

इस वास्ते सम्यक्-विश्वास या सच्चा विश्वास व्यक्तित्व-प्राप्तिके वास्ते सबसे पहला सिद्धान्त हुआ। आपको अपनेमें विश्वास करना चाहिए। विश्वास रक्खो कि आपके वास्ते सब कुछ सम्भव है, असम्भव कुछ भी नहीं है।

एक कविने कहा है। "तुम कभी कहीं भी ऐसी वस्तु न देखोगे, जिसको तुम प्राप्त न कर सको। आनेवाला कोई भी समय, चाहे वह कितनी ही दूर क्यों न हो, ऐसा नहीं है कि जो तुम्हारे पास न आयगा। इतना लम्बा कोई भी मार्ग नहीं है, जिसे तुम तय न कर सकोगे। कोई भी ऐसा आदमी नहीं है, जो उस स्थानपर पहुँचा हो, जहाँ तुम न पहुँच सको। कोई भी अधिकार ऐसा नहीं, जिसे तुम प्राप्त न कर सको। तुम अपने सहवासमें आनेवाले आदमियोंके मस्तिष्कोंका ज्ञान और उनके हृदयोंका प्रेम सञ्चय करो। अपने प्रेमियोंको भी उन्नतिके मार्गपर ले चलो। समस्त विश्वको ही सब आत्माओंके चलनेका एक पथ या अनेक पथ समझो।"

किसी दूसरे विद्वानका कथन है कि विश्वास रखनेवाले आदमीके वास्ते सब कुछ सम्भव है, कुछ भी असम्भव नहीं है।

क्या यह बात जानकर भी आपके समस्त शरीरमें हर्षसे सनसनी पैदा नहीं होती कि उपर्युक्त बात सत्य है? आप इसपर विश्वास करो और इसको अभी अपने लिए स्वीकार करो। इसपर हृदयकी समस्त शक्तिसे विश्वास करो। तुम्हें केवल विश्वासपर ही न ठहरनेका भी दृढ निश्चय कर लेना चाहिए, वरन् शीघ्र ही अपने विश्वासको दृढ निश्चयका रूप देकर उसे अमलीरूप देनेका भी प्रयत्न करना चाहिए।

इमर्सनका कथन है कि अच्छे दृढ निश्चयवाला आदमी ही अच्छा है। संस्कृतिका उद्देश्य कदापि इस अच्छाईको नष्ट करना नहीं है, वरन् समस्त विघ्न-बाधाओंको दूर करके विशुद्ध शक्तिका संचय करना है।

इस तरह दूसरी आवश्यक वस्तु है—दृढ निश्चय या पक्का इरादा।

• डावाँडोल हृदयवाले और अस्थिर-चित्त आदमी सदा असफल होते हैं। जो आदमी सफलताके पहाड़की चोटीपर पहुँचना चाहता है उसे पिछले विषय-भोगोंकी घाटियोंकी ओर नहीं देखना चाहिए, वरन् दृढ निश्चय, स्थिर हृदय, और पूर्ण उत्साहके साथ कटिबद्ध होकर सफलताकी चोटीकी तरफ अपना क़दम बढ़ाना चाहिए। रास्तेमें आनेवाली विघ्न-बाधाओंकी उसे परवा न करनी चाहिए। चाहे कभी उसका साँस फूल जाय और पैर लड़खड़ा जायें, तो भी उसे खड़े टीलों और ऊँचे पहाड़ोंको पार कर जाना चाहिए। चाहे उसे पीछेसे कोई पुकारे, तो भी उसे न ठहरना चाहिए। उसे तो समस्त कठिनाइयोंके होते हुए भी ऊपर ही बढ़ना चाहिए, सामने मृत्यु होते हुए भी ऊपर ही चढ़ना चाहिए। जो आदमी जीवनमें सफलता प्राप्त करना चाहता है, उसका हृदय इतना दृढ होना चाहिए कि वह सांसारिक मोह, सामाजिक बंधन और दूसरे आदमियोंकी बातोंकी तरफ ध्यान न देकर संकटों और आपत्तियोंके होते हुए भी अपने निर्दिष्ट मार्गसे विचलित न हो। जिस समय स्त्री और पुरुष व्यक्तित्वके महान महलकी बुनियादमें ये दृढ, सच्ची और अजेय आधारशिलाएँ रक्खेंगे, उस समय उनकी सारी मनोकामनाएँ पूरी होंगी, कारण कि प्रत्येक कामका अच्छा आरम्भ ही उस कामकी सफलताका द्योतक है।

यह पुस्तक उन युवा स्त्रियों तथा पुरुषों और अपनी युवावस्थाके अन्तिम भागपर पहुँचे हुए उन आदमियोंके वास्ते लिखी जा रही है, जो यह अनुभव करते हैं कि उनके पास व्यक्तित्वकी वह अपूर्व शक्ति नहीं है, जो कि वास्तवमें उनकी ही है।

सम्यग्विश्वास और उद्देश-प्राप्तिके दृढ संकल्पको भले प्रकार समझनेके पश्चात् हमें आत्म-परीक्षाका कार्य करना चाहिए। इस बातमें किसीको भी सन्देह न होना चाहिए कि व्यक्तित्वके अभावकी जड़ें कमज़ोरी, आत्मापमान, आत्म-लोलुपता, आलस्य और मानसिक तथा शारीरिक त्रुटियोंमें ही हैं। ये निकमी आदतें

आत्माको गिरा देती हैं। कोई भी आदमी तब तक व्यक्तित्व प्राप्त करनेके योग्य न हो सकेगा, जब तक कि वह अपने हृदयांतरमें मन, वचन, तन और आत्माकी शुद्धि तथा पवित्रताके महत्त्वको अच्छी तरहसे न समझेगा। अपवित्र विचार आदमीको बरबाद कर देते हैं। जिस आदमीका मन अपने इन शत्रुओं—गन्दे विचारोंको आने देता है, उसे आगे बढ़नेकी आशा कदापि न करनी चाहिए।

कविवर टैनीसनका कथन है कि मेरी सुन्दर तलवार लोहेके टोपोंको काट सकती है, क्योंकि वह अचूक है और मेरी शक्ति दस आदमियोंकी शक्तिके बराबर है, क्योंकि मेरा हृदय पवित्र है।

पवित्रता ही बल और शक्ति है। जिस आदमीके काम पवित्र हैं, जिसके माथेपर बदनामीका कलंक नहीं लगा है और जिस आदमीकी आँखें बुरे काम न करनेके कारण कभी नीची नहीं होती हैं, वही आदमी सच्चा वीर है। ऐसा आदमी ही विजयके राजमार्गका पथिक है। सम्मान ऐसे आदमीकी हर समय राह देखता है और वैभव उसके मुखके पास चमकता है। पवित्रताके विना व्यक्तित्व प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए व्यक्तित्वप्राप्तिके इच्छुकोंको यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि यदि कभी वे झुकते हैं अथवा किसी बुरे कामकी इच्छा करते हैं, तो उन्हें इसका भयंकर मूल्य देना पड़ेगा। झिझकनेवाले आदमियोंको अपनी झिझक छोड़ देनी चाहिए और अपने आपको संसार-युद्धके वास्ते तय्यार कर लेना चाहिए। जो शक्तिहीन आदमी अपनी शक्तियोंको अपर्याप्त समझते हैं, उन्हें धैर्य्य तथा साहस धारण करना चाहिए। क्योंकि जब उनकी मनोवृत्ति पवित्रताकी ओर है, तब उनके हृदय आवश्यकता पड़नेपर अवश्यमेव दृढ़ता और बल प्राप्त करेंगे। जिन आदमियोंके आचार-विचार पवित्र हैं, उनके हृदय प्रसन्नता और आनन्दसे लबालब भरे रहने चाहिए और उनके मुखपर कृतज्ञताके चिह्न होने चाहिए। क्योंकि वे

जनसमूहमें राजाके समान शक्तिसम्पन्न, भद्र और वीर होकर रहे हैं। ऐसा पवित्राचारी आदमी ही अपने शुद्ध, दृढ, बलवान् और दैवी हाथोंको दुर्बलों, पतितों, पतनोन्मुखों, दुःखितों, निस्सहायों और गिरते हुए आदमियोंकी रक्षाके लिए उठा सकता है। उसके स्पर्श मात्रमें ही दूसरे आदमियोंका जीवन होगा। पवित्र आदमीकी शक्ति अपार है। उसे कौन माप सकता है? वह अनन्त है। वह ईश्वरीय बल है। वही व्यक्तित्व-प्राप्तिका राजमार्ग है।

इन पंक्तियोंको अपने हृदय-पटपर गहरा अंकित कर लो, तथा इनपर खूब विचार करो। अपनी शक्तिके अनुसार इनपर अमल करनेका प्रयत्न भी करते रहो।

३—आत्म-ज्ञान

" आत्म-ज्ञान, आत्म-सम्मान और आत्म-संयम ही मनुष्यको महती शक्तिकी ओर ले जाते हैं। " —टैनीसन।

" मनुष्यको अपना महत्त्व समझ लेने दो, फिर वह सब वस्तुओंको अपने पैरोंके नीचे कर लेगा, अपने वशमें कर लेगा। " —इमर्सन।

आत्म-सम्मानके बिना सच्चा व्यक्तित्व प्राप्त नहीं हो सकता। इस लिए प्रत्येक आदमीका मन, वचन और तनसे ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिसको वह अपने जीवनमें बुरा न समझे तथा जिससे उसे लज्जित न होना पड़े। जब कोई आदमी अपने सम्मानकी स्वयं ही परवाह नहीं करता, तब वह अपने साथियोंसे अपने सम्मानकी कैसे आशा कर सकता है? इस लिए यह बहुत ही आवश्यक है कि वह अपने आपको जाने और अपना ज्ञान प्राप्त करे। आत्म-ज्ञान केवल अपने अभ्यन्तरको देखने तथा आत्मानुवीक्षणसे प्राप्त होता है। दृढ व्यक्तित्व-प्राप्तिके इच्छुकको अपने आन्तरिक जीवन, अपने हृदय, उद्देश्यों और इच्छाओंका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए ताकि उसे अपनी वास्तविक स्थिति मालूम हो जाय। उसे यह मालूम होना चाहिए कि वह कहाँ खड़ा है। उसे अपनी उन त्रुटियों (यदि कोई हों) को भी जानना चाहिए जिनका सुधार करना है। उसे अपनी उन दुर्बलताओंका भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जिनको दूर करना ज़रूरी है। उसे अपनी उन कमज़ोरियोंका भी बोध होना चाहिए, जिनके कारण भूतकालमें उसे हानि पहुँच चुकी हो अथवा हानि पहुँचनेकी सम्भावना हुई हो और जिनको दूर करनेकी तरफ़ अब पूरा ध्यान देना चाहिए ताकि भविष्यमें उसके दृढ विचार और सुनिश्चित ध्यानसे उसकी प्रगतिका मार्ग उसके पदार्पण करनेसे पहले ही दृढ हो जाय, उसमें कोई रुकावट न रहे। वास्तवमें यह जानना बड़ा ही उत्साहवर्धक है कि प्रत्येक दुर्बल स्थानको दृढ

दुर्ग या किला बनाया जा सकता है और प्रत्येक ऐसे चंचल भावको जो भूतकालमें हमारे पतन और नाशका कारण हो चुका हो, उमंग और दृढ संकल्पद्वारा इतना दृढ बनाया जा सकता है, जिसपर मानसिक प्रवृत्तियोंका ज़रासा भी प्रभाव न पड़े। अत्यन्त ही दुर्बल आदमियोंके वास्ते यह कितना बड़ा शुभ सन्देश है। भीरु तथा दुर्बल-हृदय आदमियोंके वास्ते यह कितने आनन्दकी बात है! जिस शक्ति, धैर्य्य, साहस और निर्भीकताको तुमने दूसरे आदमियोंके अधिकारमें अनुभव किया है, वे तुम्हारे लिए भी हैं, यदि तुम जाग्रत होकर उनपर अपना अधिकार प्रकट करो! परन्तु इनके वास्ते मूल्य देना पड़ता है। प्रत्येक स्त्री तथा पुरुष जानता है कि उसका मूल्य क्या है और उसे क्या देना होगा। वह मूल्य रुपये-पैसे नहीं, किन्तु आत्म-निग्रह, त्याग, आत्म-निरीक्षण और अथक भक्ति है। हम सब इस महान् मूल्यको अच्छी तरह जानते हैं, परन्तु इसको दिये विना ही हम सब समस्त जीवनमें दुर्बल बने रहते हैं। इस लिए हमें आत्म-परीक्षाकी उस पगडंडीको कभी न रोकना चाहिए जो कि आत्म-ज्ञानके राजमार्ग तक पहुंचती है।

यहां यह प्रश्न हो सकता है कि मान लो कोई आदमी अपने हृदयमें किसी निकृष्ट बातको देखता है, या यों कहो कि वह आत्म-परीक्षासे जानता है कि उसके हृदयमें पतित भाव मौजूद हैं, अथवा उसे मालूम होता है कि कभी उसने बुरे काम किये हैं, तो इससे क्या लाभ? इसका उत्तर केवल यही है कि क्या किसी आदमीके वास्ते अपनी निकृष्ट बातोंको जानना इससे अच्छा नहीं है कि वह उस पापके अन्धकारपूर्ण गढ़ेमें पड़ा रहे जो कि उसके जीवन-स्रोतोंको विषैला कर रहा है और जो उसके समस्त जीवनकी उत्तम तथा अत्यंत बड़ी बातोंका नाश कर रहा है? यहां उन स्त्री-पुरुषोंके वास्ते लिखा जा रहा है जो ढोंग तथा मायाचारकी इच्छा न करके वास्तविकताको चाहते हैं, जो दिखा-वटी जीवनके स्थानपर वास्तवमें खरे तथा विशुद्ध जीवनके

इच्छुक हैं और जो मतमतान्तरों, मान्यताओं तथा दूसरोंके सिद्धान्तोंपर ठहरनेके स्थानपर अपने आपको दृढ नींवपर खड़ा करना चाहते हैं। एक आदमी अपने सम्बन्धमें जो कुछ भी मालूम कर सकता है, वह उसे अवश्य मालूम करना चाहिए, क्योंकि आत्म-ज्ञान ही तो वह स्वयं है। यदि किसी आदमीका अपने पड़ोसियों और अपने सम्पर्कमें आनेवाले आदमियोंके साथ ईमानदारीका व्यवहार नहीं है, तो उसका देवालय, मन्दिर और मसजिद आदिमें जाना किस कामका ? यदि उसका जीवन पवित्र नहीं है और उसके वचन सच्चे नहीं हैं, तो उसकी लम्बी लम्बी प्रार्थनाओं और स्तुति-पाठोंका क्या मूल्य है ? यह बड़े हर्षकी बात है कि अब धर्म-सम्बन्धी भ्रम-मूलक अन्ध विश्वास दूर होता जा रहा है और अब वे दिन चले गये जब कि आदमी सारहीन धर्मको सहन करेंगे। अब तो वह दिन आ रहा है, जब कि आदमियोंके लिए धर्म और जीवनका एक ही अर्थ समझा जायगा। ऐसे शुभ दिनका अभी प्रभात मात्र है। अब आदमियोंका धर्म किसी धर्मस्थानपर एकत्रित होने, तीर्थयात्रा करने, किसी मत-विशेषका अनुयायी मात्र होनेसे न जाँचा जायगा; किन्तु अब वह आदमी धर्मात्मा समझा जायगा, जो कि वास्तवमें पवित्र और भद्र होगा, जो अपने वचन और कर्मसे सच्चा होगा और जिसकी दिनचर्य्या सम्माननीय, दयापूर्ण, शिष्ट और निर्दोष होगी। अब बहुतसे धर्मोंकी मानता न होगी, वरन् एक धर्मका सम्मान होगा, और वह है वास्तविक, प्राकृतिक और आत्मस्वभावरूप धर्म। और तब 'परमात्मा' 'परमात्मा' चिल्लानेवाले आदमी धर्मात्मा न समझे जायँगे, वरन् परमात्माके आदर्शोंको अपने अमली जीवनमें परिणत कर दिखानेवाले आदमी ही धर्मात्मा माने जायँगे।

मानव-हृदयका वह धर्म कितना प्राकृतिक और अकृत्रिम है, जो कि सादगी, सत्य, प्रेम, विश्वास, दया, भद्रता, वास्तविक पुरुषत्व और सच्चे, मधुर तथा दृढ स्त्रीत्व आदि महान्

गुणोंसे बना हुआ है। हमें अपने धर्मसम्बन्धी आदर्शोको और ऊँचा करना चाहिए और उसकी नींव अपने हृदयोंमें गहरी रखनी चाहिए, क्यों कि जो बात वास्तविक नहीं है, वह न तो धर्म ही हो सकती है और न आत्माका सार ही हो सकती है। इस लिए ऐसे बनावटी धर्मसे पीछा छुड़ाना होगा और उसके दम घोंट देनेवाले प्रभावसे अपने आपको मुक्त करना होगा। अत एव आत्म-ज्ञानके नामसे डरो मत। आत्म-ज्ञानके इसी द्वारसे आत्मा स्वतंत्रता और विजयको प्राप्त करता है। आत्म-ज्ञानका अभाव पुरुषों तथा स्त्रियोंको उस दुर्बल तथा नाशकारक मानसिक स्थितिमें डाल देता है, जिसे हम स्वात्माके सम्बन्धमें तुच्छ विचार रखना कहते हैं। तात्पर्य यही है कि आत्म-ज्ञानके अभावसे आदमी अपने आपको तुच्छ तथा नीच समझने लगता है, जब कि आत्म-ज्ञान उसको वीर, अमर और आत्माभिमानी बना देता है। इस लिए व्यक्तित्वके परमावश्यक आधार आत्माभिमान और आत्म-विश्वास हैं। किसी भी ऐसे पुरुष या स्त्रीने कभी व्यक्तित्व प्राप्त नहीं किया, जिसको आत्म-विश्वासपर काफ़ी अधिकार प्राप्त न था। महात्मा जेम्स एलनने अपनी एक पुस्तकमें* लिखा है—
"अपने आपको तुच्छ समझना ही आत्म-पतन है। वास्तवमें यह आत्म-हत्याका ही एक भेद है। जिस आदमीका इस प्रकारका विश्वास है कि उसके शुद्धाचारका महत्त्व गन्दे वस्त्रों जितना है, अर्थात् कुछ भी नहीं है, उसमें कुछ भी अच्छी बात नहीं है और वह कभी अपने प्रयत्नोंसे उन्नति नहीं कर सकता है। ऐसा आदमी अपनी इस मनोवृत्तिसे अपने आपको नपुंसक बना रहा है, अपने आत्माका गला घोंट रहा है और अपने चरित्रकी सर्वोच्च तथा परमोत्कृष्ट वस्तुकी जड़को काट रहा है और उसे तितर बितर कर रहा है।"

---

* शाइनिंग गेट-वे (Shining Gateway).

"आत्म-तिरस्कारसम्बन्धी प्रत्येक विचार व्यक्तित्वकी शक्ति और मूलका नाशक लुटेरा तथा रोग है।"

अपने आपको तुच्छ और नीच समझना बहुत हानिकारक है। इस प्रकारके विचार मानव-समाजको उसकी शक्ति और वास्तविक बलसे वञ्चित कर रहे हैं। 'संसार झगड़ोंका स्थान है' अथवा 'यह दुःखोंका घर है'—इन विचारोंके प्रभावसे मानव-हृदयोंकी संसारके सौन्दर्यको देखनेकी शक्ति नष्ट हो गई है। वास्तवमें आदमी क्षुद्र जीव नहीं है। यदि वह परमात्म-पदको पानेका संकल्प करे, तो परमात्मा बन सकता है। वह अपने मन और शरीरका राजा है। वह अपने प्रत्येक वचन और प्रत्येक कामका नेता तथा पथ-प्रदर्शक है। जब कोई आदमी उपर्युक्त अवस्थाको प्राप्त कर लेता है, तब समझना चाहिए कि उस आदमीने अपने सच्चे आदर्शकी ओर बढ़ना आरम्भ कर दिया है। वह अपने ध्येयकी ओर चल पड़ा है।

आओ, अब हम फिर एक बार उन सब बातोंको दोहरा दें, जो कि अब तक कही गई हैं। वे क्रमसे (१) सम्यग्विश्वास, (२) दृढ संकल्प, (३) आत्म-परीक्षा अथवा आत्मानुवीक्षण, (४) आत्मज्ञान, (५) आत्म-विश्वास, (६) आत्म-सम्मान और (७) आत्म-संयम हैं।

जिस मार्गको बतानेका प्रयत्न यहाँ किया जा रहा है, वह इतना सरल नहीं है कि उसे एक आलसी तथा बेपरवा आदमी प्राप्त कर ले। थोथे विश्वास, जंत्र-मंत्र और जादू-टोनेका भी यह मार्ग नहीं है। और जादू आदिपर आज विश्वास भी किसका है? व्यक्तित्व-प्राप्तिका मार्ग कठोर आत्म-साधना और तीव्र मानसिक प्रयत्नका मार्ग है। जेम्स एलनने एक और स्थानपर कहा है कि "किसी बुरी आदतके सामने झुकनेसे आदमी अपने ऊपर राज्य करनेके अधिकारको खो देता है।" "जो आदमी आत्म-साधनासे बचना चाहता है और विचार-शक्तिकी प्राप्तिके वास्ते किसी जादू

आदिको इसलिए तलाश करता फिरता है कि वह बिना हाथ-पैर हिलाये ही इस महती शक्तिको प्राप्त कर ले, तो वह आदमी अपने आपको धोखा दे रहा है और अपनी मौजूदा विचार-शक्ति-को भी दुर्बल बना रहा है।" "बुरी आदतोंपर विजय पानेमें सफल होनेसे जो विचार-शक्ति उत्पन्न होती है, वह मनुष्यको नवीन अच्छी आदतें डालनेमें समर्थ बनाती है। क्यों कि एक बुरी आदतसे छुटकारा पानेके वास्ते दृढ उद्देश्यकी आवश्यकता है और एक नई आदत बनानेके वास्ते अपने उद्देश्यके बुद्धिपूर्ण उपयोगकी ज़रूरत है। ऐसा करनेके वास्ते एक आदमी मनसे चुस्त तथा शक्तिशाली होना चाहिए और उसे अपने ऊपर निरंतर देख-भाल रखनी चाहिए।"

विचार-विकाशके मार्गमें पारगामिता एक अनुल्लंघनीय तथा अनिवार्य स्थान है। हरएक कार्यको ठीक पूरे रूपसे करना अत्यंत आवश्यक है। फूहड़पनका कार्य दुर्बलताका चिह्न है।

४—श्रुति-ज्ञान

"मैं अपना जीवन कहीं भी क्यों न व्यतीत करूँ; परन्तु सदा आत्मसंतुष्ट रहूँगा और सारी आकस्मिक घटनाओंका सामना करनेके वास्ते तय्यार रहूँगा।"

—वाल्ट विटमैन।

"तुम ऐसी किसी भी वस्तुको नहीं बता सकते, जो मेरे ज्ञानसे परे हो। तुम कभी यह मत सोचो कि कोई भी काम तुम्हारी शक्तिसे बाहर है। तीव्र इच्छावाले आदमीके वास्ते कुछ भी असम्भव नहीं है। क्या इसे करना चाहिए? हां, मैं इसे जरूर करूँगा। बस, यही एक नियम है, जिससे सफलता मिलती है।"

—कस्यचित्।

व्यक्तित्वहीन आदमी सदा दूसरे आदमियोंके आदर्शों और निश्चयोंके भरोसेपर रहता है और उसके द्वारा ही अपने जीवनको व्यवस्थित करता है; किन्तु व्यक्तित्वयुक्त आदमी अपने जीवनको स्वयं ही व्यवस्थित करता है।

वह दूसरे आदमियोंकी सम्मतियोंको यथेष्ट आदरके साथ सुनता है, किन्तु उसके ऐसा करनेका अभिप्राय यह नहीं होता कि वह उन सम्मतियोंके ढंगपर अपने जीवनको बनाता है। उसका मंशा केवल उन सम्मतियोंमेंसे अच्छी तथा उत्साहवर्धक बात ग्रहण करना ही होता है। दूसरोंकी सम्मतियाँ समुचित आदरके साथ सुननेमें सुननेवाले आदमीकी शिष्टता और नम्रता भी एक कारण है, तथा इससे यह भी प्रकट होता है कि हमें दूसरे आदमीके विचारोंका सहनशीलतापूर्वक आदर करना चाहिए। किन्तु हमें यह कभी न भूलना चाहिए कि एक व्यक्तित्वयुक्त आदमी सदा अपने ही निश्चयोंपर चलता है और उनके ही द्वारा अपने जीवन तथा चरित्रको व्यवस्थित तथा संयत करता है।

व्यक्तित्व अपने उद्देश्यकी स्वयं घोषणा करता है, और वह सब प्रकारसे पूर्ण होता है। व्यक्तित्वयुक्त पुरुष तथा स्त्रियाँ इस बातको समझ चुकी हैं कि किसीकी नकल करना आत्महत्या है।

यदि कोई आदमी किसी दूसरे बड़े आदमीकी इस लिए नकल करता है कि वह दूसरा आदमी पहले आदमीके वास्ते सम्मानपात्र है, तो यह कहना चाहिए कि नकल करनेवाला आदमी दूसरे आदमीकी चलती-फिरती छाया मात्र है। नकल करनेवाले आदमी अपना असली रूप नहीं होते, वे ढोंगी, झूठे और मुलम्मेके समान होते हैं। यदि हम किसी कामको केवल इसी लिए करते हैं कि कोई बड़ा आदमी हमें ऐसा करनेको कहता है, न कि इस लिए कि हमारा हृदय उस कामको करनेकी प्रेरणा करता है, तो कहना होगा कि हम बहुरूपिए और निर्जीव शरीर मात्र हैं, सच्चे पुरुष या स्त्री नहीं हैं।

जब जब हम किसी दूसरे आदमीकी नकल करते हैं, या किसी ऐसे कामको करते हैं, जिसे करनेको न तो हमारा अन्तःकरण ही कहता है और न जिसकी सच्चाईमें हमें विश्वास ही होता है, तब तब हम अपनी शक्तियोंको नष्ट करते हैं। किसी कामको प्रचलित अथवा रूढ़ि समझकर करना अपने अन्तःकरणकी शक्तियों तथा अपनी विवेकबुद्धिको दुर्बल करना है। ऐसा करनेसे तो हम अपने आपको ठीक सम्मति स्थिर करनेमें अयोग्य बना लेते हैं। जिन आदमियोंकी आन्तरिक विवेकशक्ति नष्ट अथवा सुषुप्त न हो गई हो, निस्सन्देह उनके वास्ते हर समय दूसरे आदमियोंके निश्चयों तथा आदर्शोंके सामने झुकना बड़ी कठिनतासे सम्भव होता है। ऐसे (झुक जानेवाले) आदमियोंकी आन्तरिक विवेकशक्ति सहजहीमें सर्वथा नष्ट हो जाती है और यदि फिर कभी वह जाग्रत भी होती है, तो उस समय जब कि उसके जीवनका श्रेष्ठ तत्त्व उनके हृदयोंकी कमजोरी और इस झुकनेवाली प्रवृत्तिकी भेंट चढ़ जाता है।

अपने हृदयमें सहसा उठनेवाले विचारों, भावों और तरंगोंकी देख-भाल रक्खो। उन्हें उठते ही ग्रहण कर लो और उन्हें यों ही विलुप्त मत हो जाने दो। यह सोचते हुए कि यह बड़ा आदमी अथवा कोई दूसरा बड़ा आदमी तुम्हारेसे बड़े विचार सोचेगा, उच्च भाव पेश करेगा और तुम्हारे वास्ते उच्च आदर्श रक्खेगा, कभी दूसरे आदमियोंके विचारोंकी बाट मत देखो, उन्हें तलाश

करते इधर उधर मत फिरो। तुम ऐसा क्यों करते हो? दूसरा आदमी ही उच्चतर भाव क्यों सोच सकता है? क्या इसकी तहमें यही भाव काम करता है कि उसके पास सोचने-विचारनेकी कोई बड़ी शक्ति है? क्या वह बहुत अच्छा सोच सकता है? ऐसा ख्याल करना बड़ी भारी भूल है। सोचने-विचारनेकी शक्ति हर-एक आदमीके पास है और अभ्याससे सब आदमी उसे बढ़ा सकते हैं। जो आदमी अपने विश्वासोंको सन्देहकी नज़रसे देखता है, अपने विचारोंकी अवहेलना करता है, अपनी योग्यताको अविश्वासकी दृष्टिसे देखता है और दूसरे आदमियोंकी सम्मतियों, योग्यताओं और विचारोंको, पुराने होते हुए भी, महत्त्वपूर्ण समझता है, वह कभी व्यक्तित्व प्राप्त नहीं कर सकता। वह प्रभावशाली और प्रतिभाशाली नहीं बन सकता। ऐसा कहनेका अभिप्राय बड़े बड़े विचारकोंकी अवहेलना कराना या उनके प्रति अश्रद्धा पैदा कराना नहीं है और न इसका मंशा यह है कि आदमी दूसरोंके विचारोंसे लाभ ही न उठाए, वरन् इसका तात्पर्य यह है कि आदमी स्वयं अपने अन्दर सोचने-विचारनेकी शक्ति पैदा करे, दूसरोंके विचारोंको बिना सोचे समझे स्वीकार न कर ले और किसी पेटेण्ट दवाईके समान आँख मीचकर गलेके नीचे न उतार जाय। इस लिए तुम सदा अपने ही विचारानुसार काम करो। वह विचार तुम्हारा है, उसमें विश्वास रक्खो और उसे स्वीकार करो। मान लो कि अपने विचारानुसार काम करते हुए तुम्हें यह मालूम हो कि तुम गलती कर रहे हो, ठीक मार्गपर नहीं जा-रहे हो, तो भी वह भूल देखने मात्रकी अथवा बहुत कम हानिकारक होती है। इसका परिणाम अच्छा ही होगा। क्योंकि एक दो बार भूल करनेपर फिर तुम वैसा नहीं करोगे। उन भूलोंसे उठाई हुई हानि तुम्हारे लिए भविष्यमें कई प्रकारसे लाभ देनेवाला व्यय होगा। क्या किसीने घोड़ेपर एक दो बार गिरे बिना सवारी करना सीखा है? क्या अपने जीवनको खतरेमें डाले बिना किसीने तैरना सीखा है? फिर भला मनके घोड़ेपर, विचारशक्तिकी तीव्र-

गामी सवारीपर क्या कोई आसानीसे बिना ठोकर खाये ही काबू पा सकता है? विचारशक्तिके अथाह समुद्रमें जीवनको संकट-में डाले बिना ही क्या कोई उसे पार करना सीख सकता है? भूल करके काम सीखना और विफल होकर सफल होना एक बड़ा लाभदायक व्यापार है। आदमीकी अपनी आन्तरिक प्रेरणाओंके नियमके अतिरिक्त कुछ भी वास्तविक नहीं है।

इमर्सनका कथन है, "जो वास्तवमें मनुष्य है, वह हरएक बातको यों ही मान लेनेका हमेशा विरोधी होगा। जो आदमी अमर विजयोंको प्राप्त करना है, वह अच्छाईके नामसे कभी नहीं रुकता, वह तो उसे भी पार करता है। मनुष्यके हृदयकी पवित्रतासे बढ़-कर कोई भी दूसरी वस्तु पवित्र नहीं है। अपने आपको पापोंसे बरी और दोषोंसे मुक्त कर लो, फिर समस्त संसार तुम्हारे साथ होगा। मुझे एक उत्तर याद है। जब मैं नवयुवक था, तब मैंने यह उत्तर दूसरे आदमियोंकी प्रेरणापर एक ऐसे आदमीको दिया था, जो मुझे ईसाईधर्मकी प्राचीन मान्यताओंको स्वीकार करनेपर बाध्य कर रहा था। मैंने कहा कि जब मेरा जीवन सर्वथा मेरी आन्तरिक भावनाओंके अनुकूल है, तब मुझे प्रथाओंकी पवित्रतासे क्या काम? इसपर मेरे मित्रने कहा कि सम्भव हो सकता है कि वे भावनाएँ उच्च श्रेणीकी न हों, बुरी हों। इसपर मैंने उत्तर दिया कि मुझे तो वे भावनाएँ बुरी मालूम नहीं होतीं; किन्तु यदि वे भावनाएँ बुरी भी हों, तो मैं भी बुरा रहूँगा। अपनी प्रकृति तथा स्वभावके नियमके अतिरिक्त दूसरा कोई भी नियम मेरे लिए पवित्र नहीं है। जो कुछ कि मुझे करना चाहिए, उस सबका सम्बन्ध मुझसे ही है। मेरा कर्तव्य वह नहीं है जो कि दूसरे आदमी सोचते हैं।

अपनी निजकी शक्तिको अपने व्यवहारोंसे प्रकट करो। ऐसा जीवन कदापि व्यतीत मत करो जो कि दूसरोंके जीवनको प्रकट करता है। तात्पर्य यही है कि मनुष्यको अपना जीवन अपने ही विचारानुसार ढालना चाहिए, दूसरोंके विचारानुकूल नहीं।

बिना किसी बाह्य दबावके अपने स्वभावके अनुसार काम करनेकी शक्तिके कोषको हमने खो दिया है और उसे तलाश करनेकी, उस खोई हुई शक्तिको दुबारा प्राप्त करनेकी बड़ी भारी आवश्यकता है। दुर्भाग्यसे हमने आधुनिक शिक्षाको इस बातकी आज्ञा दे दी है कि वह स्वयमेव प्राप्त होनेवाले ज्ञानका गला घोंट दे, उसे प्राप्त न होने दे। जो बात शिक्षकों और पुस्तकोंद्वारा हमारे गलेसे नीचे उतार दी जाती है, अपनी आत्मिक शक्तिद्वारा उससे अधिक जाननेकी हम चेष्टा ही नहीं करते। वास्तवमें बहुत करके यह ग़लत किनारेपर ही काम करना होता है। इस तरह आदमी सत्य और ज्ञानको अपने हृदयमें तलाश करनेके स्थानपर उनके लिए बाहर मारा मारा फिरता है। आदमी इनके वास्ते अपने उस आन्तरिक प्रकाशको छोड़कर, जो कि उसके शरीरका आंख नाक कान आदिके ही समान एक अंग है, बाहरके सहारोंपर निर्भर होता है। यह बड़े ही खेदकी बात है कि मानव-हृदयका यह अप्रकट दैवी प्रकाशपूर्ण नियम आज मत-मतान्तरों, सिद्धान्तों, रीतियों और रूढ़ियोंद्वारा इस बुरी तरहसे कुचल दिया गया है कि मनुष्य-जाति आज नाटक-पात्र, और नक्काल मात्र रह गई है। हममेंसे बहुतसे आदमियोंकी आध्यात्मिक तथा नैतिक अवस्था आज विकृत हो रही है और बहुत ही कम आदमी हृष्ट, पुष्ट, दृढ और बलवान् हैं। हम देखते हैं कि बहुत ही कम आदमी सीधे तनकर तथा लचीले कदमसे चलते हैं। थोड़े ही आदमी शान्त दृष्टिसे अथवा तेजोमय आंखसे देखते हैं। कुछ ही आदमियोंकी ध्वनि उनके वक्षःस्थलसे जोरके साथ निकलती है। वे शेरके समान नहीं चिंघाड़ते, वरन् नाकसे गुनगुनाते हैं। और इने-गिने आदमी ही अपने सुदृढ़ व्यक्तित्वके बलपर संसारके दूसरे व्यक्तियोंसे टक्कर लेते दिखाई देते हैं।

ऊपर उन आदमियोंका चित्र खींचा गया है जो कि अपने आपको आत्म-संयत, आत्म-सम्पन्न, स्वतंत्र, उत्साही, विशाल-हृदय, महान् और शक्ति-सम्पन्न बनानेका साहस करते हैं।

ऐसे ही स्त्री-पुरुष अपने स्वतंत्र मनुष्यत्व और व्यक्तित्वके बड़े महलमें रहनेकी हिम्मत करते हैं और फिर वे हमपर अपने स्वातंत्र्यके सौन्दर्य और अपने स्वावलम्बनपूर्ण कार्योंको प्रकट करते हैं।

हमें श्रुतिज्ञानकी इस महती शक्तिका पुनरुद्धार करना चाहिए और वस्तु-स्वभावके रहस्योंमें प्रवेश करना चाहिए और उनहींके अनुकूल अपना जीवन बनाना चाहिए। वस्तु-स्वभावका यह सच्चा ज्ञान मानव-हृदयकी मौलिक सादगी ही है और यही वस्तु-स्वभाव सर्वकालमान्य धर्म है।

श्रुतिज्ञानके पवित्र सरोवरको फिरसे ढूंढ़ना ही पूर्ण सत्य, आन्तरिक प्रेरणा और उस प्रत्यक्ष ज्ञानको तलाश करना है जो कि हमें निस्सन्देह स्त्री तथा पुरुष बना देगा।

श्रुतिज्ञान, बिना बाह्य दबावके स्वेच्छापूर्वक काम करना, स्वतंत्रता और आत्म-सम्मान ही कुछ ऐसी सीढ़ियाँ हैं, जिनपर चढ़कर हम व्यक्तित्वको प्राप्त करते हैं।

स्त्री-पुरुषोंको अपने दृढ़, ऊँचे और श्रुतिज्ञान तथा आत्म-सम्मान-द्वारा सदा व्यक्तित्व-प्राप्तिका प्रयत्न करना चाहिए।

५—निश्चय और तत्परता

" सत्यपर डटे रहो, न्याय-युक्त कामको करते हुए कभी लज्जित मत होओ। जिस बातको तुम न्याययुक्त समझते हो, उसीका निश्चय करो और फिर उसपर जम जाओ। " — जार्ज ईलियट।

" किसी भी कामको आधा-धोधा करनेसे मैं घृणा करता हूं। यदि वह काम न्याययुक्त है, तो उसे वीरतापूर्वक करो और यदि ठीक नहीं है, तो मत करो। " गिलपिन।

व्यक्तित्व-प्राप्तिके मार्गकी बड़ी बड़ी रुकावटोंमेंसे एक रुकावट झिझक या डाँवाडोलपन है। व्यक्तित्वयुक्त आदमी अपने मनको दृढ कर लेता है और अपने सब कामोंको अच्छी तरह सोच लेता है। वह सब बातोंको विवेककी तराजूपर तोलता है और एकाग्र तथा लगातार विचारद्वारा ठीक निष्कर्षों, नतीजोंपर पहुँचता है। जो बात उसके वास्ते ठीक है, उसे वह जानता है और उसे ही स्वीकार करता है। विपरीत इसके, एक व्यक्तित्वहीन आदमी अपने लिए दूसरे आदमियोंको सोचनेकी आज्ञा देता है, उन्हींके निश्चयोंको मानता है और स्वयं अपना कोई निश्चय नहीं रखता। इसी लिए वह सदा दूसरे आदमियोंके निश्चयों, मतों और विचारोंके साथ चलता है। इसका फल यह होता है कि वह झिझकीला और अनिश्चित-हृदय हो जाता है और लगातार इस विचारसे उस विचारपर मारा मारा फिरता है। वह कभी एक विचारको स्वीकार करता है, फिर शीघ्र ही उसे छोड़कर किसी दूसरे विचारको ग्रहण कर लेता है। ऐसा आदमी समुद्रमें बहनेवाले तिनकेके समान है। जिस प्रकार उस तिनकेकी गति निश्चित नहीं होती, उसी प्रकार उस आदमीके विचारकी गति भी निश्चित नहीं होती। जिस प्रकार तिनका स्वयं नहीं चलता, वरन् समुद्रके बहावके साथ बहता है, ठीक उसी प्रकार वह आदमी भी ज़मानेकी रौके साथ बहता रहता है।

ऐसे आदमीके पास कुछ देर बैठनेसे ही उसके मनकी अस्थिरता और उसकी नींवकी कमजोरी मालूम हो जाती है। वह आदमी नदीके किनारेके वृक्षके समान अरक्षित होता है। ऐसी अवस्थामें व्यक्तित्व कभी प्राप्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि प्रथम तो उसका अपना मत या निश्चय ही नहीं होता, वह दूसरे आदमियोंके मतोंका समूह होता है। दूसरे, जो बात वह कहता है, वह दृढ विचारपूर्वक ठीक निश्चित की हुई नहीं होती, अपने हृदयके पूर्ण विश्वासके साथ नहीं कही जाती, बल्कि सदा ऐसी दुर्बल, अविश्वसनीय और प्रभावहीन प्रवृत्तिपर अवलम्बित होती है, जैसे कि 'अमुक आदमी ऐसा कहता है', 'धर्मशास्त्रोंमें यह लिखा है' और 'बड़ोंकी परम्परा यह है'। किन्तु एक व्यक्तित्वयुक्त आदमीको इस बातकी परवा नहीं होती कि कोई आदमी क्या कहता है। फिर चाहे कहनेवाला आदमी कोई धर्माचार्य हो या गृहस्थ। उसे इस बातकी भी चिन्ता नहीं होती कि धर्मशास्त्रोंमें उस बातके सम्बन्धमें क्या व्यवस्था मिलती है और बड़ोंकी क्या परम्परा है। उसके लिए तो बात सत्य होनी चाहिए, अन्यथा उसका उससे क्या सम्बन्ध? समस्त धर्माचार्यों, शिक्षकों, सम्प्रदायों और बड़े आदमियोंकी उपेक्षा करता हुआ एक व्यक्तित्वयुक्त आदमी अपने आत्माके पूर्ण बलसे कहता है कि 'मेरे लिए यही न्याययुक्त है'। चाहे ऐसे आदमीके निश्चयों और हमारे निश्चयोंमें कितना ही अन्तर क्यों न हो, कितना ही मत-भेद क्यों न हो, फिर भी हम ऐसे शक्तिशाली तथा स्वतंत्र विचारक आदमीके प्रभाव और बलको अनुभव किये बिना नहीं रह सकते। उसे अवश्य अनुभव करते हैं। उसके प्रत्येक विचार, शब्द और काममें ऐसी शक्ति, विश्वास और प्रभाव निकलता है कि उसमेंसे हमारी तरफको पुण्यस्रोत बहता है। हम यह भी अनुभव करते हैं कि ऐसे आदमीकी थोड़ीसी संगतिसे हमें वह शक्ति प्राप्त होती है, जो हमें भद्र स्त्री-पुरुष बना देती है। व्यक्तित्वमें यही महत्त्व है कि जिसके पास वह होता है, उसे उपदेश

देने और प्रचार करनेके वास्ते बाहर फिरनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती । उसका तो जीवन ही उपदेशमय तथा आशीर्वादपूर्ण होता है ।

अत्यन्त महती शक्तिका सदा अनुभव किया जाता है, वह सुनी नहीं जाती । हृदय ही इसको समझता तथा अनुभव करता है, आँखोंके सामने इसका कोई प्रदर्शन (Demonstration) नहीं किया जा सकता, इसकी कोई नुमाइश भी नहीं होती ।

इस पुस्तकके आरम्भमें कहा गया था कि हम व्यक्तित्वके दिनकी ओर जा रहे हैं । उस सुदिनका उदय हो चुका है । समाचारपत्रोंके पढ़नेसे हमें यह विश्वास होता है कि संसारने व्यक्तित्वकी शक्ति और उसके अधिकारोंको समझ लिया है । नाम, धन, उपाधियाँ और बड़ी बड़ी स्थितियाँ आज ऐसी हैं जैसी कि हवाके सामने खाक । योग्यता, साहस, गुण, पवित्रता, मानसिक बल और चरित्र ही आज बड़ी वस्तुएं हैं । व्यक्तित्वके सुदिनका यह तो प्रभात मात्र है, उसका पूर्ण विकाश हमें क्या न देगा ?

संसारके इतिहासमें सदा पात्र और अधिकारीको ही सम्मान नहीं दिया गया है और न सच्चे महापुरुषोंने भूतकालमें वे सम्मान ही प्राप्त किये हैं, जो कि उन्हें अपने व्यक्तिगत बल और साहससे प्राप्त होने चाहिए थे । उनके स्थानमें कितनी ही बार दूसरे आदमियोंका उनकी स्थिति–पोज़ीशन–और नामके कारण सम्मान किया गया है । कितनी ही बार उच्च स्थितिके आदमियोंको उनकी बड़ाईके कारण सम्मान प्राप्त हुआ है, उनके साहस और वीरत्वके कारण नहीं । किन्तु इस प्रकारकी बातें आज बहुत अंशोंमें बिदा हो चुकी हैं । आज हमारे साथ व्यक्तित्वका बल है । मनुष्य आज सब कुछ है और व्यक्तित्व ही आज वास्तविक महत्त्वका माना हुआ चिह्न है ।

अब हम मन और चरित्रको दृढ करनेमें सहायता देनेवाली बातोंका विचार करते हैं । सबसे पहली बात यह है कि अप्रिय कामों और कर्तव्योंको कभी टालना न चाहिए—मुलतवी न करना

चाहिए। मन-चाहने, प्रिय कामोंको पहले करनेके वास्ते छाँटना आपके लिए एक बहुत ही साधारण बात हो सकती है; किन्तु अनुभव और निरीक्षणसे यह मालूम होता है कि प्रिय कामोंको पहले करना अपने चरित्रको दुर्बल तथा पतित बनाना है। व्यक्तित्व-प्राप्तिके रास्तेमें यह आदत एक बड़ी रुकावट है। आपके सामने एक कठिन काम है और आप उसे टालकर अपनी दिनचर्याको आरम्भ करते हैं। आप उस कामको छोड़कर उन कामोंको करते हैं, जो आपको अच्छे तथा प्रिय लगते हैं और जिनके करनेमें आपको आनन्द आता है। क्या इस ढंगसे टाला हुआ कोई काम कम अप्रिय और कम कठिन बन जायगा? नहीं, यह नहीं होता। बल्कि उसे छोड़ देनेसे आप ही उस कामको करनेके लिए कम योग्य हो जाते हैं। इस प्रकार धीरे धीरे आप कम योग्य और अधिक दुर्बल बनते जाते हैं। ऐसा करनेसे प्रायः जितना आप समझते हैं, उससे अत्यधिक खो देते हैं।

पुस्तककी मूल लेखिका एक ऐसे नवयुवकको जानती हैं, जिसे एक बड़े कामपर लगाया गया था। उस कामके वास्ते अधिक आत्म-त्याग, संलग्नता, पवित्रता और कठिन श्रम करनेकी आवश्यकता थी। वह नवयुवक उस कामके वास्ते सब तरहसे योग्य था। बहुत ही कम आदमी इतने स्पष्ट और उच्च विचारोंवाले होंगे। किन्तु एक दिन उसने लिखा, मैं यह जानता हूँ कि जब आप यह पढ़ेंगी, तब आपको बहुत दुःख होगा; किन्तु मैं आपसे कहना चाहता हूं कि अपनी इच्छासे ही मैंने कम कष्टोंका काम पसन्द किया है और अपने सभी आदर्शोंको और जो कुछ मैं बनना चाहता था उसको आज मैं छोड़ रहा हूं। उस नवयुवकके इस कामका जो फल हुआ, उसपर मूल लेखिकाने दुःखपूर्वक पर्दा डाल दिया है, उसे प्रकट नहीं किया है। ओरिज़न स्वेटमार्डनका कथन है कि कम कठिनाईके मार्गको पसन्द करनेकी आदत इतनी बुरी है, जितनी कि अफ़ीम खाने और मदिरा-पानकी आदतें बुरी होती हैं। साधारण तौरसे सोचनेसे ही मालूम हो जायगा कि ऐसा

क्यों है। कम कठिनाईके काम पसन्द करनेकी आदतसे और अप्रिय कामोंको टालनेकी आदतसे अनिश्चितता, झिझक, आत्म-अविश्वास और समयकी पाबन्दी न करनेकी बुरी आदतें पैदा हो जाती हैं और उन्हें दृढता मिलती है। इसलिए जो स्त्री-पुरुष सदा कठिन और अप्रिय कर्तव्योंको हमेशा टालते रहते हैं, वे न कभी साधारण जनतासे ऊँचे उठ सकते हैं और न बड़े आदमी ही बन सकते हैं।

अब ज़रा इससे विपरीत बातपर भी विचार करो। उस महती शक्तिका विचार करो जो कि आदमीको कठिन और अप्रिय कामोंको पहले करनेसे प्राप्त होती है। इससे हमें निश्चय, तत्परता, शक्ति, उत्साह, विश्वास, आत्म-विजय और कठिनाइयोंका सामना करनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

व्यक्तित्वयुक्त आदमी सदा अपने मनपर क़ाबू रखते हैं और अपने आपको अपनी मानसिक अवस्थाओंके वशवर्त्ती नहीं होने देते।

६—आत्म-विश्वास

" आत्म–विश्वास रक्खो, क्योंकि इसी लोहेके तारसे प्रत्येक हृदय स्पन्दित होता है । "
—इमर्सन ।

" मनुष्य ही स्वयं अपना पथ-प्रदर्शक है । जो आत्मा मनुष्यको ईमानदार और पूर्ण बना सकता है, वही समस्त प्रकाश, पूर्ण प्रभाव और सारे भाग्यपर राज्य करता है । उसके लिए कोई बात समयसे पहले या पीछे नहीं होती । "
—ब्योमांट एण्ड फ्लेशर ।

यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि आज कल मनुष्योंके हृदयोंमें बड़ी गड़बड़ मच रही है, जिसके कारण किसी गुण या दोषको उसके असली रूपमें नहीं देखा जाता । यदि बहुधा दुर्बलताको शक्तिका नाम दिया जाता है, तो पुण्यको ही पाप या पापको ही पुण्य कहा जाता है । कम बोलनेवालेको मूर्ख और अधिक बोलनेवालेको बातूनी या झक्की कहनेवाले आदमियोंकी भी यहाँ कमी नहीं है । अन्ध विश्वासको धर्म, कर्मको ढोंग और शक्तिको, कायरता कहनेवाले भी बहुत हैं । देशभक्तिको गद्दारी और धोखेबाजीको नीति कहा जाता है । विचारहीन आदमी यदि आत्म-विश्वासको अहम्मन्यता कहते हैं, तो दासोंके समान दूसरे आदमियोंकी नकल करनेको और अपने हृदयके प्रारम्भिक भावोंको ग्रहण न करनेके कायरतापूर्ण भयको विनय कहा जाता है ।

जो आदमी अपने लिए स्वयं सोचता है, और अपने स्वयंभूत सलाहकारोंकी बातोंपर ध्यान न देकर अपने हृदयपर अंकित नियमोंको समझता है तथा उन्हें व्यवहारमें परिणत करता है, उस आदमीको प्राय ज़िद्दी, दुराग्रही, और घमण्डी आदि नामोंसे पुकारा जाता है । जो आदमी दूसरोंको सलाह देना अपना मुख्य कर्तव्य समझते हैं, वे यह भविष्यवाणी किया करते हैं कि वह

आदमी अपनी हठसे दुख उठायगा। साथ ही वे लोग उस भविष्यका भी बड़ा सुन्दर चित्र खींचते हैं, जो कि उनकी सम्मतिके अनुसार काम करनेसे उसे प्राप्त होता। थोड़ेसे ही निरीक्षणसे हमें यह विश्वास हो जायगा कि जो आदमी इधर उधर सम्मति माँगता फिरता है, वह प्रायः पीछे बैठनेवाले आदमियोंमेंसे होता है, आगे बैठनेवालोंमेंसे नहीं होता। इस बातसे इन्कार नहीं किया जा सकता कि कुछ अवसर ऐसे भी आते हैं जब कि दृढ व्यक्तित्ववाले स्त्री-पुरुष भी अपने सच्चे और विश्वस्त मित्रोंसे कुछ बातोंके बारेमें सलाह किया करते हैं। एक आदमी वास्तविक सहायिका अपनी प्रिया धर्मपत्नीसे सलाह करेगा और एक स्त्री अपने हृदयानुकूल पतिसे भी सम्मति लेगी; किन्तु ये दूसरी बातें हैं और इनका प्रस्तुत विषयसे कोई सम्बन्ध नहीं है। वे ऐसा किसी दुर्बलताके कारण अथवा दूसरेके निश्चयपर विश्वास ही कर लेनेके भावसे नहीं करते, वरन् सहानुभूति, आत्मीयता और बड़े विश्वासके भावसे करते हैं। निस्सन्देह यह एक बड़े सम्मान और हर्षकी बात है कि दृढ व्यक्तित्वयुक्त स्त्री-पुरुष आपसमें किसी विषयपर बातचीत करते हैं और एक दूसरेके विचारोंको समुन्नत करके जीवन-निर्वाहके अधिक योग्य बनते है।

युवा आदमियोंको प्रत्येक अवसर और हर अवस्थामें सम्मति देना बड़ी भारी भूल है। 'तुम यह करो', 'मेरी सम्मति मानो और उसपर चलो', 'वहाँ मत जाओ', और 'तुम्हें यहाँ अवश्य आना चाहिए' आदि सम्मतियाँ प्रत्येक स्त्री-पुरुषके वास्ते विनाशकारक हैं। यह कितने दुःखकी बात है कि बहुतसे माता-पिता तथा संरक्षक ऐसा सोचते दिखाई देते हैं कि युवकोंको सोचने-विचारनेकी अपनी कोई शक्ति ही न रखनी चाहिए और उन्हें सदा ही बड़े तथा बुद्धिमान् आदमियोंकी सम्मतिसे काम करना चाहिए, उनके इशारोंपर चलना चाहिए। सबसे अच्छी सम्मति जो किसी भी नवयुवकको दी जा सकती है, वह यही है कि "मेरे प्यारे लड़के, अपने मुआमलेपर तुम स्वयं विचार करो और अपने

निश्चयके अनुसार काम करो"। फिर यदि आरम्भमें वह भूल भी करे, तो भी उसे उस भूलसे अधिक लाभ होगा और दूसरोंकी सम्मतियोंपर आँख मीचकर चलनेकी अपेक्षा वह भूल उसको अधिक उत्तम आदमी बना देगी। हमें मनुष्योंकी आवश्यकता है, न कि लाठीसे हाँके जानेवाले पशुओं और इशारेपर नाचनेवाली कठ-पुतलियोंकी। हमें दृढ और शक्तिशाली आदमियोंकी आवश्यकता है। हमें ऐसे आदमी चाहिए जिनकी बुद्धि तीक्ष्ण हो और जिन्हें अपने आपपर भरोसा हो। हमें ऐसे दृढ स्त्री-पुरुषोंकी ज़रूरत है, जो रीति-रिवाजों, परम्पराओं और समाजकी कठोर तथा निरर्थक रूढियोंको ठुकरा सकें तथा उन्हें अँगूठा दिखा सकें, अपने आत्माके विश्वासोंपर दृढ तथा सच्चे रह सकें और उलटे समझे जानेसे—गलत-फ़हमीसे—न डरें, अर्थात् यदि जनता उनके कामों तथा बातोंका उल्टा अर्थ भी लगावे, तब भी परवा न करे। एक महात्माका कथन है कि, "विचारों तथा कामोंकी मूर्खतापूर्ण समानता अनुदार-हृदय आदमियोंका भूत है, जिसकी साधारण राजनीतिज्ञ, तत्त्ववेत्ता और धर्मके ठेकेदार पूजा किया करते हैं। एक महान् आत्माको समानता तथा परम्परासे कुछ मतलब नहीं होता है। आदमीका समानतासे उतना ही सम्बन्ध है जितना कि उसका दीवारपर पड़ी हुई अपनी छायासे। तुम्हारे जो विचार आज हैं, उन्हें आज बड़े ज़ोरके साथ प्रकट करो और तुम्हारे जो विचार अगले दिन हों, उन्हें फिर उसी उत्साहके साथ जाहिर करो, चाहे ये विचार तुम्हारे पहले सब विचारोंका खण्डन करते हों। शायद तुम्हें खयाल हो कि इससे आदमी तुम्हारे विषयमें अवश्य उलटी धारणा कर लेंगे, किसी गलत-फ़हमीमें पड़ जायँगे। तो क्या उलटा समझा जाना बहुत बुरा है? संसारमें बड़ेसे बड़े आदमियोंको लोगोंने उलटा ही समझा है, ठीक नहीं समझा। पीथागोरस, सुकरात, ईसा मसीह, लूथर और न्यूटन आदि तथा दूसरे पवित्र और बुद्धिमान् महान् आदमी सब उलटे ही समझे गये थे। महान् होना ही उलटा समझा जाना है।"

लोग तुम्हें उलटा समझते हैं, तो क्या तुम उनकी धारणाको पलट सकते हो? यह काम तुम्हारा नहीं है, समयका है। कुछ समय पीछे, अधिकसे अधिक तुम्हारी मृत्युके बाद, सब लोग तुम्हें ठीक कहेंगे और तुम्हारा मज़ाक करनेवालोंको भूले हुए बताकर तुम्हारा सम्मान करेंगे। अच्छा, तुम ही बताओ कि आज उन महात्माओंको कौन उलटा कहता है, जिनके नाम ऊपर लिये गये हैं? इसलिए जनताको व्याख्याओं तथा स्पष्टीकरणों (clearing position) से संतुष्ट करना व्यर्थ है। जो आदमी अपने प्रत्येक कामकी व्याख्या करते हैं और अपने प्रत्येक मौलिक अथवा रूढिसे विरुद्ध कामके वास्ते क्षमा माँगते हैं, वे दुर्बल हैं। व्याख्या करना अपने कार्यके आधारके विषयमें स्वयं सन्देह स्वीकार करना है। और जो सन्देह करता है, उसका बुरा होता है। आदमीको ठीक समझे जानेकी प्रतीक्षा करनेको तय्यार रहना चाहिए।

लगातार क्षमा माँगना या क्षमा माँगने जैसी सूरत बनाये रखना रूढियों और प्रथाओंके प्रभुत्व तथा शक्तिको स्वीकार करना है। इससे यह भी प्रकट होता है कि क्षमाप्रार्थी आदमी भी समाजका गुलाम और रूढियोंका दास है।

'जो कुछ मुझे करना चाहिए उसका सम्बन्ध मुझसे है न कि जनताके विचारोंसे'— यही व्यक्तित्वयुक्त स्त्री-पुरुषोंका व्यवहार होता है। जीवनका यही एक नियम पतित तथा क्षुद्र आदमियोंको महात्माओंसे, कायरोंको वीरोंसे और असफल आदमियोंको सफल आदमियोंसे जुदा करता है।

संसारमें ऐसे आदमी सदा रहेंगे जो कि यह खयाल करेंगे कि वे तुमसे अधिक उत्तम जानते हैं; किन्तु यदि तुम उनसे वाद-विवाद करनेके वास्ते रुकते हो, ठहरते हो, तो तुम बुरा करते हो, अपने-पर आपत्ति लाते हो, कारण कि उसी समय तुम अपनी शक्तियोंको खराब करना, तितर-बितर करना आरम्भ कर देते हो। उनसे ऐसे विषयोंपर विवादमें लगाया हुआ समय नष्ट ही होता है,

जिनका फैसला स्वयं तुम्हें करना चाहिए। स्वतंत्रताका सौन्दर्य, कार्य-भेद और आत्म-विश्वासके आधारपर किये हुए काम उपर्युक्त व्यवहारसे अलग रहते हैं।

एक प्राचीन भारतीय ऋषिका कथन है, कि, "किसी दूसरे आदमीपर भरोसा मत रक्खो। अपने ऊपर विश्वास रक्खो और अपने ही कामोंका भरोसा करो। दूसरे आदमीकी इच्छाके अधीन होना दुःख देता है और आत्म-विश्वासमें सच्चा सुख है।" गोसाईं तुलसीदासजीने भी कहा है 'पराधीन सपने सुख नाहीं।' संस्कृत भाषाके एक प्राचीन कविने तो यहाँ तक कह दिया है कि 'जीवनात्तु पराधीनाज्जीवानां मरणम् वरम्' अर्थात् पराधीन जीवनसे तो मर जाना ही अच्छा है।

अपने ऊपर भरोसा करनेमें युवा पुरुषोंकी सहायता करना उनके लिए धन छोड़नेकी अपेक्षा अधिक अच्छा है। क्योंकि यदि वे स्वावलम्बनका पाठ पढ़ चुके हैं, तो संसारमें अपना मार्ग आप निश्चित कर लेंगे तथा संसारकी बड़ीसे बड़ी विभूतिको प्राप्त करनेमें समर्थ होंगे, किन्तु यदि उनमें उपर्युक्त गुण नहीं है, तो आपकी छोड़ी हुई सम्पत्तिको वे दो दिनमें उड़ा देंगे।

किसी पिता अथवा संरक्षकके जीवनमें वह समय गर्व करनेका है जब कि उसका बेटा कायरतापूर्वक सम्मति न माँगकर किसी कामको स्वयं करनेकी और किसी नवीन मार्गपर चलनेकी घोषणा करता है। इससे यह प्रकट होता है कि वह अपने मुआमलेपर स्वयं विचार कर रहा है और बुद्धि तथा निश्चयको काममें लाना सीख रहा है।

जो स्त्री-पुरुष अपने आपको दूसरे आदमियोंको सम्मति देनेके योग्य समझते हैं, वे स्वयं सदा शक्तिसम्पन्न नहीं होते। मूल लेखिका एक ऐसे शक्तिसम्पन्न तथा प्रभावशाली आदमीको जानती है जिसने वृद्ध या युवा, स्त्री या पुरुष, कभी किसीको सम्मति नहीं दी, किसीको आज्ञा भी नहीं दी, बिना पूछे अपना मत भी प्रकट नहीं किया और जिसने किसी दूसरेसे सम्मति या मत भी कभी नहीं

माँगा। न तो उसने कभी किसीकी आज्ञा सहन ही की और न कभी किसीको आज्ञा दी। वह आदमी अपने लिए नियम था। इस बातमें कुछ ईश्वरीयता है और कुछ ही आदमी इसे प्राप्त करते हैं। इसे प्राप्त करनेके वास्ते महान् हृदय, उच्चादर्श, स्पष्ट निरीक्षण और दृढ़ इरादेकी आवश्यकता है। इसकी प्राप्तिका अर्थ ही सब भयोंको अपने हृदयसे निकाल देना है।

व्यक्तित्वयुक्त आदमीको जीवन या मृत्युका भय नहीं होता। वह जानता है कि ये दोनों ही अपने अपने समयपर अच्छे हैं और इसलिए वह जीवन और मृत्युका स्वामी होता है। उसे समाजका भी भय नहीं होता। क्योंकि वह अपने साथियोंकी प्रशंसा या निन्दाकी परवाह नहीं करता, इनका उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उसके लिए ये दोनों ही समान हैं और वह उनमेंसे किसीकी भी परवाह नहीं करता। वह सत्यसे भी नहीं डरता। कारण कि वह स्वयं सत्य है। जैसा एक आदमी अपने हृदयमें सोचता है, वह वैसा ही होता है। वह भाग्यसे भी डर नहीं मानता। क्यों कि वह स्वयं ही अपने भाग्यका मालिक है। वह भावीसे भी दूर नहीं भागता, क्यों कि वह जानता है कि चरित्र ही भाग्य है, चरित्र ही भाग्य बनता है। वह यह जानता है कि मुझे अपने सिवाय और कोई दूसरा आदमी सफलता नहीं दे सकता। वह समझता है कि कोई भी वस्तु मेरे भाग्यको नहीं रोक सकती। अपने पवित्र और सिद्धान्तानुकूल मार्गपर चलनेमें असमर्थता या असफलताके सिवाय कोई भी दूसरी चीज़ मुझे अपने आदर्शकी प्राप्तिसे नहीं रोक सकती। उसके मार्गपर वही प्रकाश पथ-प्रदर्शकके रूपसे पड़ सकता है जो कि उसके अभ्यन्तरसे प्रकट होता है, दूसरा नहीं।

पारगामिता

(पूरी योग्यतासे काम करो)

" जो कुछ तुम्हें करना है, उसे अपनी पूरी ताकतसे करो " —बाईबल ।

" वीर पुरुष वही है जो कि अटल रूपसे डटा रहता है । आदमियोंमें जो बड़ा अन्तर है, वह यह है कि एक आदमी अपने ऐसे सिद्धान्तों तथा कर्तव्योंसे बँधा हुआ है जिनपर तुम विश्वास कर सकते हो, भरोसा कर सकते हो, जब कि दूसरा आदमी इस प्रकारके किसी भी सिद्धान्तसे बँधा हुआ नहीं होता । और चूँकि उस आदमीमें कोई नैतिकता नहीं है, वह किसी सिद्धान्तपर चलनेवाला आदमी नहीं है, इसलिए उसे कोई भी वस्तु नहीं बाँध सकती । " —इमर्सन ।

जो काम करनेके योग्य है, वह सदा ठीक रूपसे ही किये जानेके योग्य है—यही सदा दृढ आदमियोंका पथ-प्रदर्शक नीति-वाक्य (Motto) है । व्यक्तित्वयुक्त आदमी अपनी प्रतिज्ञाको अपनी सारी ताकतसे और अपने प्रत्येक कर्तव्यको पूरी ईमानदारीसे पूरा करता है । अपने कामके छोटे छोटे अंशको भी पूरी तरहसे करना ही उसका उद्देश होता है ।

एक दुर्बल व्यक्ति सड़ियल, फूहड़ाना और साधारण कार्यसे ही सन्तुष्ट हो जाता है । उसके लिए यह बात काफी है कि उसका काम चलता रहे । बस, इसीपर वह संतोष कर लेता है । ऐसे स्वभाववाले आदमी उससे अधिक काम कभी नहीं करते हैं जितनेके वास्ते वे अपने आपको पुरस्कृत समझते हैं, जितनेके वास्ते उनके विचारमें उन्हें मेहनताना मिला है । 'जो कुछ मेहनत-मजदूरी या परिश्रमिक मुझे मिलता है, उसके बदलेमें मेरा काम काफी है' ऐसा कथन सदा अयोग्य, सुस्त और अच्छा काम न करनेवाले आदमियोंका ही हुआ करता है । कहना व्यर्थ है कि ऐसे आदमी कभी किसी महत्त्वपूर्ण पदको प्राप्त नहीं करते । ऐसे आदमी अपने मालिकोंके—उनसे काम करानेवाले आदमियोंके—हृदयोंमें अपने लिए कोई विश्वास पैदा नहीं करते ।

वह सदा अपने मेहनताने, मजदूरी, के अनुसार काम करता है, इस लिए उससे काम करानेवाले सदा उसको उसके कामके अनुसार मजदूरी देते हैं। इतना ही नहीं, दुनियामें एक और बड़ा नियम काम करता है, जिसे काम करनेवाले और काम करानेवाले आदमी भी नहीं जानते। वह नियम यह है कि जो आदमी योग्यता रखता है, उसीको पुरस्कार मिलना चाहिए।

उच्चादर्शोंवाला एक दृढ आदमी हमेशा एक खरे आदमीके समान काम करता है, एक किरायेपर रक्खे हुए आदमीके समान नहीं। चाहे वह दिमागी, मस्तिष्कका, काम करे या हाथका काम करे, उसका काम उसके जीवनका अंश होता है। वह अपनी कलाकी अच्छाईको मजदूरीके पैसों या रुपयोंसे मापकर खराब न करेगा। मुझे इतने पैसे मिलते हैं, वैसा ही अच्छा मुझे काम करना चाहिए, इस विचारसे प्रेरित होकर वह कभी अपनी कारीगरीमें बट्टा न लगायेगा। एक दिनका काम उसके लिए बहुत ही आवश्यक और मूल्यवान् वस्तु है और इसे वह, इस खयालसे कि क्यों कुछ पैसोंके वास्ते अपने पुरुषत्वकी महती शक्ति खराब की जाय, श्रेष्ठसे कम दरजेका न करेगा। उसे अपनी उन्नतिके लिए न तो किसी स्कीमको तय्यार करनेकी आवश्यकता है और न अपने वेतनको बढ़वानेके लिए किसीसे कुछ कहनेकी। यहाँ भी फिर वही नियम काम करता है कि जो आदमी योग्यता रखता है, उसे पुरस्कार अवश्य मिलना चाहिए।

पूरे और खरे कामके सामने सबको झुकना पड़ता है। जो छोटेसे छोटा काम निकम्मा, रद्दी अथवा अधूरा किया जा सकता है, वही परमात्माकी सेवा या अपना कर्तव्य समझकर सारे चातुर्य्य तथा कलासे अच्छी तरह भी किया जा सकता है।

किसी भी स्त्री या पुरुषके वास्ते इससे अधिक लज्जा और गिरावटकी बात क्या होगी कि उसे एक कामको दुबारा करनेके वास्ते इस लिए कहा जाय कि उसने अपना काम ठीक तौरसे नहीं किया है, अधूरा किया है।

प्रभावशाली जीवन—

जिस ढँगसे कोई काम किया जाता है वह ढँग ही काम करने-वाले आदमीके चरित्रको प्रकट करता है, फिर चाहे वह काम कुछ भी क्यों न हो।

जो आदमी व्यक्तित्व प्राप्त करनेकी इच्छा करता है, उसे कभी किसी कामको अधूरा और रद्दी न करना चाहिए। उसका लक्ष्य अपने कामके हरएक भागको पूर्ण रूपसे करना ही होना चाहिए। वह आदमी चाहे किसी भी परिस्थितिमें काम क्यों न कर रहा हो, उसका पथ-प्रदर्शक नीति-वाक्य यही होना चाहिए कि 'खरा और पूरा काम करो'।

जो आदमी अपने मालिककी उपस्थितिमें, उसकी हाज़िरीमें तो कामको लगनके साथ करता है, किन्तु मालिकके पीठ फेरते ही सुस्तीसे कामको भद्दा या मामूली करना आरम्भ कर देता है, वह न किसी शक्तिको प्राप्त करता है और न प्रभुत्वको पाता है। ऐसा आदमी इस प्रकारके व्यवहारसे अपने लिए एक ऐसी अवस्था पैदा कर लेता है, जो उसे अपने भविष्यपर ज़रासा भी विचार करनेपर भयभीत कर देगी।

वर्तमानमें हम सब अपने पूर्व कर्मोंका फल भोग रहे हैं। यदि हम अपनी वर्तमान अवस्थासे सन्तुष्ट नहीं हैं, यदि हमारी वर्त-मान स्थिति हमारी रुचिके अनुसार नहीं है, तो, इसका दोष हमपर ही है। स्वयं हमने पिछले कर्मोंसे अपनी वर्तमान अवस्था-को पैदा किया है। हम तो अब केवल पहले बोये हुएको काट रहे हैं। बहुतसे आदमी इस बातको स्वीकार न करेंगे, क्योंकि वे इसे एक कठोर लोकोक्ति कहते हैं; किन्तु उनके विश्वास करने या न करनेसे कुछ बनता बिगड़ता नहीं। प्राकृतिक नियम अटल रूपसे अपना काम करते हैं। जिस प्रकार एक किसान गेंहू बोकर गेंहू ही काटता है, जौ बोकर जौ ही काटता है और बबूल बोकर बबूल ही काटता है; ठीक इसी प्रकार हम भी अपने जीवनमें पूर्वकालमें बोये हुए अपने विचारों तथा कर्मोंके बीजोंके अनुसार ही फल पाते हैं। जैसा बोते हैं, वैसा ही काटते हैं। जैसा करते हैं, वैसा ही भरते हैं।

इसी बातको अँग्रेज़ीके एक कविने बड़े ही अच्छे ढँगसे कहा है, जिसका आशय यह है:—

"जो कुछ हम बोते हैं, वही हम काटते हैं। ज़रा पासके खेतोंको देखो। वहाँ सरसोंसे सरसों पैदा हुई है और अन्नसे अन्न पैदा हुआ है। जिस ढँगसे यह बात हुई है, उसे कोई नहीं जानता, यह प्रकृतिका रहस्य है। इसी प्रकार आदमीका भाग्य बनता है।"

"किसान अपने खेतमें बोये हुए बीजोंको काटने आता है और अन्नके साथ साथ व्यर्थकी ऐसी घास-फूस तथा विषैली बेलें भी पाता है जिनसे उसे दुःख होता है और जिनसे भूमिको भी कष्ट होता है।"

"यदि किसान उचित रूपसे परिश्रम करे और अपने खेतमेंसे हानिकारक घास-फूसको निकालकर उसके स्थानपर उपयोगी तथा फलदायक पौधे बोता रहे, तो खेत फलदायक, सुन्दर और साफ़ हो जाय और होनेवाली फ़सल कीमती बन जाय।"

क्या हम अपने लिए अच्छी अवस्थाओंकी इच्छा करते हैं? क्या हम अपने आसपासकी परिस्थितियोंको पहलेसे अधिक रोचक तथा सुन्दर देखना चाहते हैं? क्या हम किसी ऐसे उच्च पदको प्राप्त करनेकी इच्छा करते हैं, जिससे कि हमारा जीवन उच्च तथा विशाल बन जाय? यदि हम ये बातें चाहते हैं, तो हमें अभीसे उनके लिए काम करना चाहिए और अपने आपको उस हालतके योग्य बनाना आरम्भ कर देना चाहिए। हमें अपने जीवनको इतना वास्तविक, इतना पूर्ण, इतना परिश्रमी और इतना ईमानदार बना देना चाहिए कि जिससे हमारा भविष्य, जो कि वर्तमानमें ही बन रहा है, कार्य और कारणके सम्बन्ध-सूचक नियमके अनुसार हमारे लिए वे सब वस्तुएँ लाये, जिनकी हम इच्छा करते हैं।

खरा और पूरा काम करना योग्यताकी छाप है: चिह्न है।

योग्यता व्यक्तित्वकी छाप है।

८—सद्व्यवहार

"सद्व्यवहारकी प्रायः उपेक्षा की जाती है। यह पुरुषोंके वास्ते अत्यंत अधिक आवश्यक है और स्त्रियोंके लिए भी किसी तरह कम आवश्यक नहीं है। × × × सद्व्यवहार सद्गुणोंकी छाया हैं। ये उन अच्छाइयोंकी अल्पकालिक प्रदर्शिनी हैं, जिन्हें हमारे साथी प्रेम करते हैं तथा जिनका वे आदर करते हैं। यदि हम वैसा ही बननेका प्रयत्न करें जैसा कि हम बाहर प्रकट होनेका प्रयत्न करते हैं, तो सद्व्यवहार हमारे कर्तव्योंके पालनके लिए उपयोगी पथ-प्रदर्शकका काम दे सकते हैं।"

—सिडनी स्मिथ।

"सुन्दर आकृति सुन्दर मुखकी अपेक्षा उत्तम है, किन्तु सद्व्यवहार सुन्दर आकृतिसे भी अच्छा है। वह मूर्तियों और चित्रोंसे भी अधिक आनन्द देता है। यह सारी ललित कलाओंमें सर्वश्रेष्ठ कला है।" —इमर्सन

"मैंने एक व्यक्तिको देखा है। उसके सद्व्यवहार यद्यपि सभ्य समाजके नियमोंके सर्वथा अनुकूल थे, किन्तु उनको उसने उस समाजमें न सीखा था। वे मौलिक तथा प्रभावशाली थे और उसको उनसे समृद्धि तथा रक्षा प्राप्त होती थी। उसे कभी न्यायालयकी सहायताकी आवश्यकता न पड़ी। × × × वह प्रसन्नचित्त सुस्वभावी और स्वतंत्र था। × × उसमें राजाओंके समान वैभव था। वह अल्पभाषी तथा गम्भीर था और लाखों आदमियोंद्वारा देखे जाने योग्य था।"

—इमर्सन।

अब तक रीति-रिवाजों और रूढ़ियोंकी दासतासे स्वतंत्रता पाने और स्वाधीनताके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा गया है, उससे यह न समझा जाना चाहिए कि सद्व्यवहारकी किसी प्रकारसे बुराई की गई है। यदि कोई पाठक ऐसा विचार करता हो, तो उससे प्रार्थना है कि वह यहीं ठहर जाय। क्योंकि यहाँपर सद्व्यवहारके सम्बन्धमें ठीक बातें बताई जायँगी। यदि व्यक्तित्व-

प्राप्तिके इच्छुक स्त्री-पुरुष किसी वस्तुकी उपेक्षा नहीं कर सकते, तो वह सद्व्यवहार है। यह भी स्पष्ट रूपसे समझ लेना चाहिए कि सद्व्यवहारसे फ़ैशन, या दिखावटी शिष्टता अथवा इनके वहमका मतलब नहीं है। हमारा मतलब नामधारी चतुर आदमियोंकी बातों और उनके मूर्खतापूर्ण कामोंसे भी नहीं है। और न हमारा अभिप्राय दिखावटी बड़प्पन और ऐसी शिष्टतासे है जो कि झोल या मुलम्मेके समान किसी खास समयपर धारण किया जाय और जिसे काम निकलते ही या वह मौका टलते ही किसी दूसरे मौकेके वास्ते उठाकर सँभालकर रख दिया जाय। किसीने कहा है—"सद्व्यवहारसे ही पुरुष वास्तविक पुरुष बनता है।" इसपर यह और बढ़ाना उपयुक्त ही होगा कि स्त्रियाँ भी सद्व्यवहारसे ही वास्तविक स्त्रियाँ बनती हैं।

जिन स्त्री-पुरुषोंके साथ हम अपने जीवनमें प्रतिदिन मिलते-जुलते हैं, उनके प्रत्येक कामपर व्यवहारका रंग चढ़ा होता है। चाहे हम अपने आपको रोकनेका कितना ही प्रयत्न क्यों न करें, हम उन, अपनेसे मिलने जुलनेवाले आदमियोंको वैसा ही समझते हैं अथवा उनके सम्बन्धमें ठीक वैसी ही राय कायम करते हैं, जैसे कि वे अपने बातचीतके व्यवहारद्वारा हमें जँचते हैं, हमारे हमारे सामने आते हैं, कारण कि एक आदमीकी बातचीत और आवाज़ ही उसके हृदयको निश्चित रूपसे बताती है और उससे हमें यह भी मालूम हो जाता है कि बोलनेवाला आदमी सभ्य, शिष्ट और आनन्ददायक है या इसके विपरीत है। हम अपनेसे मिलने-जुलनेवालोंके सम्बन्धमें वैसी ही सम्मति स्थिर करते हैं जैसे कि हमें वे अपने बाह्य चाल-ढाल और ढंगसे नजर आते हैं, फिर चाहे वह चाल-ढाल शानदार, सरल और अकृत्रिम हो, या भद्दी, घबराहटपूर्ण और झिझकीली हो। अपने मेलमें आनेवाले आदमियोंके बारेमें हम उनके कामोंसे भी सम्मति कायम करते हैं, चाहे वे काम एक भद्र पुरुष या भद्र महिलाके हों या एक गँवार,

असंस्कृत और अभद्र व्यक्तिके । ऐसा करते हुए, आदमियोंके बारेमें उनकी बात-चीत, चाल-ढाल और कामोंके आधार-पर राय कायम करते हुए हम एक बड़े नियमके अनुकूल काम करते हैं, यों ही किसी वहम या व्यक्तिगत दुर्बलताके वशीभूत होकर नहीं ।

ये बातें जानना साधारण मालूम हो सकती हैं कि आदमीको भोजनके स्थानपर किस तरह बैठना चाहिए, चम्मच आदिको किस प्रकार वर्तना चाहिए, खाना-पीना किस प्रकार चाहिए, खाना खाते समय किस तरह अपने आपको आरामसे रक्खा जा सकता और अपने सहभोजियोंको किस प्रकारसे पूर्ण खुश रक्खा जा सकता है। किन्तु क्या ये बातें सचमुच साधारण हैं ? कदापि नहीं । ये बड़ी आवश्यक बातें हैं और कई बार तो सद्व्यवहारोंके अभावने बहुतसे ऐसे आदमियोंके सुअवसरोंको खराब कर दिया है, जो सब तरहसे अत्यंत उत्कृष्ट चरित्रवाले आदमी थे ।

वह दिन बहुत दूर नहीं है जब कि एक बच्चेको शिष्टता और सद्व्यवहारकी शिक्षा देना, उसकी शिक्षाका एक आवश्यक अंग समझा जायगा । अत्यंत अधिक सम्माननीय तथा आदरयोग्य जो पद हैं, उनमें प्राथमिक पाठशाला–प्राइमरी स्कूल–के अध्यापकका पद एक होना चाहिए । निस्सन्देह वह आदमी पूर्ण रूपसे भद्र तथा योग्य होना चाहिए, जिसके ज़िम्मे छोटे बच्चोंको पढ़ाने तथा दीक्षित करनेका काम है । और इसी प्रकार वह स्त्री भी सुशीला और भद्रा होनी चाहिए जिसके हाथोंमें भावी स्त्रियोंके कोमल और छाप लग सकनेके योग्य हृदयोंको ढालना है। किन्तु न तो इस पदको—प्राथमिक पाठशालाके अध्यापक अथवा अध्यापिकाके पदको—काफ़ी महत्त्व दिया जाता है और न संस्कृति तथा शिक्षा-दीक्षाके क्षेत्रमें अध्यापकोंको उनका समुचित स्थान दिया जाता है । परन्तु यह परिच्छेद अपने सार्वजनिक स्कूलोंके अध्यापकोंकी हालतको अच्छा बनानेके उद्देश्यसे नहीं लिखा जा रहा है,

इसका मतलब तो उन आदमियोंके हृदयोंपर सद्व्यवहारके महत्त्वको अंकित करना है, जो व्यक्तित्वप्राप्तिके इच्छुक हैं, उसे प्राप्त करनेकी तीव्र आकांक्षा रखते हैं।

जब हम किसी आदमीको पहली बार बोलते सुनते हैं, तब क्या कभी कभी हम कुछ धक्कासा अनुभव नहीं करते? हमें उससे कमसे कम एक शिष्ट और अच्छी बात सुननेकी आशा होती थी, किन्तु उसके स्थानमें सुनते हैं सर्वथा ही गँवारू, कठोर, तीव्र, शिष्टता-हीन और प्रतिभारहित बात। शीघ्र ही अपनी इच्छासे भी प्रबल एक महान् नियमके अनुसार हम उस स्त्री या पुरुषको उसके उचित स्थानपर स्थापित कर लेते हैं, उसके बारेमें राय कायम कर लेते हैं। हम प्रति दिन स्त्री-पुरुषोंसे गलियों, घरों आदि स्थानोंपर मिलते हैं। उनके चरित्रको ठीक रूपसे समझनेके वास्ते तथा यह जाननेके वास्ते कि वे स्त्री-पुरुष मेल-मिलाप करनेके योग्य हैं या नहीं, हमें उनके व्यवहारकी ही जरूरत है। उनके व्यवहारको देख-कर ही उपर्युक्त दोनों बातोंका फ़ैसला किया जा सकता है। चाहे हमारी तुलनात्मक स्थितियाँ कैसी ही हों, हम अपने प्रति-दिनके सम्पर्कसे, मेल-जोलसे अपने व्यवहारोंद्वारा सदा यह बात प्रकट करते रहते हैं कि हम कैसे आदमी हैं। सद्व्यवहारको शिष्टतासे तथा दूसरोंकी सेवा करनेके अवसरोंको तलाश करनेसे प्रकट किया जा सकता है। निस्सन्देह दूसरोंके वास्ते कृपा और उनका ख्याल रखना सद्व्यवहारके बड़े बड़े चिह्नोंमेंसे हैं। वास्त-विक भद्र स्त्री-पुरुष जानते हैं कि सेवा किसीको पतित नहीं करती है; वरन् सेवा करनेवालेको समुन्नत करती है। जिन स्त्री-पुरुषोंका आदर और विनय करना हमारा कर्तव्य है, उनका आदर और विनय करनेसे आदमी इतने ऊँचे उठ जाते हैं जितने ऊँचे कि वे आदमी हैं जिनकी सेवा वे करते हैं। वास्तविक संस्कृतिके आदमी आक्रमण-*कारी, शेखी मारनेवाले और शोर करनेवाले नहीं होते, वे तो हर-*एक स्थितिमें सुखी और प्रत्येक संगतिमें परिचितसे होते हैं। वे

सदा स्थिर-चित्त और आत्म-संतुष्ट होते हैं। इमर्सनने कहा है कि एक भद्र आदमी कभी शोर नहीं करता और एक भद्र महिला सदा स्थिर-चित्त रहती है। इसलिए व्यक्तित्वप्राप्तिके इच्छुकोंको अपने व्यवहारोंकी देख-भाल रखनी चाहिए। उन्हें अपना व्यवहार ठीक बनाना चाहिए। जो आदमी शिष्टता और श्रेष्ठताके मार्ग जानते हैं, उनसे उसे खुशीसे ये बातें सीखनेको तय्यार रहना चाहिए। उसे अपने वचन, चलन, आदत और हाव-भावका प्रत्येक स्थान तथा प्रत्येक परिस्थितिमें ध्यान रखना चाहिए। उसे यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि शिष्टता, सद्व्यवहार और श्रेष्ठ बर्ताव ऐसी वस्तुएँ हैं, जिन्हें व्यक्तित्वप्राप्तिके काममें छोड़ा नहीं जा सकता।

१—शारीरिक संस्कार

" शरीर-गठनकी शक्ति आदमीके अपने ही भीतर है । × × × उस आदमीको देखो और उसकी सफलताका कारण तुम समझ जाओगे । "

" जब हम एक ऐसे आत्माको देखते हैं जिसके समस्त काम शाही, प्रतिभापूर्ण और गुलाबके फूलोंके समान आनन्ददायक हैं, तब हमें परमात्माका धन्यवाद करना चाहिए कि ऐसी बातें हो सकती हैं और वर्तमानमें हैं । " —इमर्सन ।

" अपने शरीर-मन्दिरोंमें परमात्माको अधिष्ठित करो । " —सेण्ट पाल ।

जब एक आदमी यह बात स्वीकार करता है कि सुन्दर आत्मावाले आदमीकी आकृति और शरीर सुन्दर होते हैं, तब हमें यह बात भी माननी चाहिए कि शारीरिक संस्कार नामकी भी कोई वस्तु है । शारीरिक संस्कारका मतलब शरीरको ज्ञानपूर्वक सुन्दर बनाना तथा सधाना है । ऐसा करनेमें केवल शरीरको अधिक योग्य, पूर्ण और अपने कर्त्तव्योंको पालन करने तथा श्रेष्ठ काम करनेका साधन बनाना ही हमारा उद्देश्य नहीं है, वरन् उसे देखनेमें अधिक आनन्ददायक बनाना और शारीरिक प्रतिभा तथा सौन्दर्यसे अपने शरीर-मन्दिरमें परमात्माको अधिष्ठित करना और अपने भावोंमें परमात्मीयता लाना भी है ।

व्यक्तित्वयुक्त स्त्री-पुरुष एक स्वस्थ शरीरकी इच्छा करेंगे । यद्यपि संसारमें ऐसे आदमी हुए हैं और वर्तमान समयमें भी मौजूद हैं जो कि किसी न किसी रोगमें सदा ग्रसित रहे हैं और फिर भी वे महान् व्यक्तित्वके धारी हुए हैं । परन्तु वे निस्सन्देह महान् आत्माएँ हैं और अपने पूर्व कर्मोंको ज्ञात रूपसे किसी उद्देश्यके साथ काममें ला रहे हैं । इतिहास हमें बदसूरत सुकरात, अंधे मिल्टन, बहरे बीथोवन और दृष्टिहीन होमरका हाल बतलाता है । हमारे देश भारतवर्षमें भी कवि सूरदास दृष्टिहीन ही हुए हैं । वर्तमान युगके जगद्विख्यात् महापुरुष महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गाँधी कितने दुबले पतले और कमजोर आदमी हैं !

किन्तु उनकी शक्ति ? ओह ! वह अपार है। क्या हम अपने जीवनमें और बहुतसे ऐसे आदमियोंको नहीं जानते कि जो भयंकर शारीरिक दुःखोंमें फँसे होते हुए भी व्यक्तित्वकी अपरिमित शक्तिके धारक हुए हैं और जिन्होंने बहुतसे ऐसे काम किये हैं जिनका प्रभाव सदा स्थायी रहेगा ? उनमें ऐसे उदाहरण भी हैं कि किस प्रकार मानवी मन शारीरिक अवस्थाओंको जीत सकता है तथा वशमें कर सकता है और उन्हें शक्ति तथा बलकी प्रचण्ड धाराओंमें पलट सकता है। किन्तु इतनेसे ही, इसी बातके आधारपर ही हमें दुःख तथा शारीरिक दुर्बलताको कोई विशेष महत्त्व प्रदान नहीं करना चाहिए और न महान् पुरुषोंकी शारीरिक त्रुटियोंको कभी अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमें बेपरवाई करनेका या अपने शरीरकी किसी प्रकार उपेक्षा करनेका बहाना बनाना चाहिए।

किसी बड़े अँगरेज़ कविके सम्बन्धमें यह कहा जाता है कि वह व्यक्तिगत रूपसे बड़ा गन्दा रहता था और अपने बाह्य रंग-ढंगके विषयमें बड़ा बेपरवा था। इस बातका सच या झूठ होना दोनों सम्भव हैं। किन्तु यदि यह बात सच भी हो, तो भी यह इस बातकी क्या दलील है कि हमें भी वैसा ही होना चाहिए, हमें भी गन्दा तथा बेपरवा रहना चाहिए ? हमें न तो आदमियोंकी बुराइयों तथा असफलताओंकी नकल करनी चाहिए, न उनकी त्रुटियोंकी बराबरी करने या उनसे बढ़नेका प्रयत्न करना चाहिए और न उनकी बुरी आदतोंकी नकल करनी चाहिए।

यह आदमी उच्च कोटिकी कविताएँ लिखा करता था: परन्तु उनका कोई प्रभाव न होता था, कारण कि वह ज़ाहिरा तौरसे भद्दा रहता था। वह इस बातको बड़े शौकसे कहा करता था कि वह व्यक्तिगत नुमाइशकी परवा नहीं करता। इसको तो कुछ और ही नाम देना ठीक होगा।

आजकल शारीरिक संस्कारके विद्यालयोंके बहुत विज्ञापन निकलते हैं। बहुतसे नीम-हकीम आजकल समस्त रोगोंको दमके

इसमें अच्छा कर देनेके विज्ञापन धड़ाधड़ निकलवा रहे हैं। ऐसे विज्ञापन-बाज़ोंके आज हर स्थानपर दलके दल हैं। परन्तु जो स्त्री-पुरुष इनके पीछे पीछे फिरते हैं, वे शायद ही कभी स्वस्थ और सुदृढ़ होते हैं। बल्कि बहुतसे आदमी विशेषकर नवयुवक दवाइयोंके नामपर न मालूम क्या क्या विषैली औषधियाँ खाकर अपने स्वास्थ्यसे हाथ धो बैठते हैं। पर हम किसी प्रकार बुद्धिमान् बन रहे हैं और यह बात समझने लगे हैं कि परमात्माकी यह इच्छा नहीं है कि हम बीमार हों और दुःख पाएँ और न दुर्बल तथा रुग्ण होना दैवी कृपाका कोई चिह्न है। हम यह बात जानते हैं कि बीमारी तथा दुःखका अर्थ यही है कि हमने किसी न किसी समयपर किसी तरहसे प्रकृतिके स्वास्थ्यसम्बन्धी नियमोंको तोड़ा है और उसका हमें दण्ड भुगतना है।

पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य तथा योग्यता मनुष्यकी प्राकृतिक अवस्थाएँ हैं और पूर्ण स्वास्थ्यका सुख भोगना प्रत्येक आदमीका अधिकार है। इन दो बातोंको अनुभव करनेके बाद यह कहा जा सकता है कि आदमियोंके स्वास्थ्य और शारीरिक योग्यताको समुन्नत करनेवाली सारी शक्तियोंमें सबसे महान् मनकी आंतरिक शक्ति है। परमात्माने मनुष्यको अपने नमूनेका और अपनी रुचिके अनुसार बनाया है। रोग-ग्रसित, बीमार और अस्वस्थ रहना कोई दैवी मौरूस नहीं है। आनेवाली हरएक नस्ल इस सच्चाईको खूब समझेगी और इसलिए शरीरको अधिक स्वस्थ तथा अधिक योग्य बनाएगी; कारण कि उनके विचार उनके शरीरोंको अपने अनुकूल निर्माण करेंगे।

सद्विचार और सज्जीवनसे हमें केवल स्वस्थ शरीर बनानेकी ही कोशिश न करनी चाहिए, वरन् हमें इनसे अपने शरीर भी सुन्दर तथा प्रतिभा-पूर्ण बनानेकी इच्छा करनी चाहिए। जो व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, प्रतिदिन स्नान करनेकी परवा नहीं करता, जिसके नाखून कटे हुए नहीं हैं, बढ़े हुए हैं, जिसके हाथ कभी साफ़ नहीं रहते, जो अपने दाँतों और बालोंकी उपेक्षा करता

है, जो सीधा तथा अभिमानके साथ चलनेके स्थानपर बेढंगे तौरसे मुरदोंके समान चलता है, जिसकी छाती चपटी तथा थोथी है और जिसके कन्धे गोल तथा भद्दे हैं, वह आदमी न किसी प्रभुत्व और शक्तिको प्राप्त कर सकता है और न व्यक्तित्वपर ही अधिकार जमा सकता है।

पाठक यह भली प्रकार समझ गये होंगे कि ऊपरकी बातोंसे हमारा अभिप्राय उन लोगोंसे नहीं है, जो कि अपाहिज हैं, या किसी घटना विशेषके कारण दुख पा रहे हैं; वरन् उनसे है जिनके वक्षःस्थल या सीने, कम साँस लेने और चलते समय अपने शरीरको सीधा रखनेवाली शक्तिके अभावसे आगे झुकने देनेकी भद्दी आदतके कारण, चपटे और थोथे हैं और जो इस तरहसे अपनी छातीको सुकड़ी हुई तथा फेफड़ोंको कमजोर और प्रायः रुग्ण बना देते हैं। और जब ऐसे आदमियोंके सम्बन्धमें कुछ कहा जाता है, जिनके कन्धे गोल और भद्दे होते हैं, हमारा मन्शा अपाहिजोंसे कभी नहीं होता, वरन् उन ही आदमियोंसे होता है जिनके कन्धे भद्दी तरहसे उभरे हुए होते हैं। कन्धोंका ऐसा होना एक ऐसे सुस्त तथा आराम-तलब मनका चिह्न है जिसमें कि शरीरको सीधी तथा स्वाभाविक स्थितिमें चलनेवाली शक्ति तथा साधनाका अभाव होता है। बैठने, खड़ा होने और चलनेके ठीक तरीकेको ही अपनाना चाहिए। आत्म-संस्कारके उत्साही विद्यार्थी यह बात समझ गये होंगे कि इन सबका इलाज मानसिक ही है।

हम इस बातकी घोषणा करते हैं, इसे ललकार कर कहते हैं कि हरएक आदमीको सुडौल बननेका और हरएक स्त्रीको सुन्दर बननेका हक है। यह बात कभी न स्वीकार की जानी चाहिए कि एक आदमी ज्यों ज्यों बड़ी अवस्थाको प्राप्त हो, त्यों त्यों उसे अवश्य ही कम सुन्दर होना चाहिए। यह एक झूठा विश्वास है। इसी प्रकार एक स्त्रीको अपने यौवनके दिन ढलनेके साथ अपने सौन्दर्यको भी न खोना चाहिए। उसे तो दिन-प्रतिदिन अधिक सुन्दर

बनना चाहिए। अनुभवसे उसके मुख तथा शरीरको शक्ति और सौन्दर्य प्राप्त होना चाहिए। आदमीकी अधेड़ अवस्था तथा वृद्धावस्था उसकी युवावस्थाकी अपेक्षा उतनी ही सुन्दर होनी चाहिए जितनी कि डूबते हुए सूर्य्यकी छटा उसके दोपहरके प्रकाशमान तेजके समान सुन्दर होती है। पूर्ण रूपसे खिला हुआ फूल एक कलीसे अधिक सुन्दर होता है। पका हुआ फल और भी अधिक सुन्दर होता है और पतझड़के दिनोंमें मुरझाते हुए पत्ते कभी कभी वसन्त ऋतुके हरे हरे तथा चमकदार पत्तोंसे भी अधिक उत्कृष्ट सौन्दर्य रखते हैं। जब ये बातें ठीक हैं, तब प्रकृति देवीकी उच्च और श्रेष्ठ रचनाएँ—स्त्री-पुरुष—अपनी प्रतिभा, सौन्दर्य और प्रेमके उच्च आदर्शसे क्या कम रह जायँगे? यदि वे प्रकृतिके साथ सहयोग करें और अपने कर्तव्योंका पालन करें, तो ऐसा कदापि नहीं हो सकता। वे कभी प्राकृतिक सौन्दर्यके मापसे, आदर्शसे, नीचे नहीं गिर सकते। शोककी बात तो यह है कि बहुतसे आदमी उस दुःखको एक अत्यन्त कठोर वस्तुमें पलट लेते हैं जो कि आदमीको पवित्र बना सकता है। इसी प्रकार जीवनके अनुभवसे आदमीके चरित्रमें दृढ़ता तथा बड़प्पन आना चाहिए और व्यक्तित्वमें एक विशेष जादूसा आना चाहिए। परन्तु उसी अनुभवसे आदमी अपने मुखोंको कठोरसा बना लेते हैं, उनपर झुर्रियाँ और त्योरियाँ पड़ जाती हैं और वे समयसे पहले वृद्ध बनने लगते हैं। कहनेका मतलब यह है कि जीवनके अनुभवसे आदमीको शक्ति प्राप्त होनी चाहिए और उसके व्यक्तित्वमें आकर्षण पैदा होना चाहिए। परन्तु होता क्या है? ज्यों ज्यों आदमी अनुभवी होता है, त्यों त्यों वह बहुत गम्भीर बनने लगता है।

प्रत्येक आदमीके सामने शारीरिक उन्नतिका कोई न कोई आदर्श जरूर होना चाहिए। परन्तु हममें कितने आदमी ऐसे हैं, जिनके सामने शारीरिक उन्नतिका कोई आदर्श है? यदि अबतक हमारे सामने शारीरिक उन्नतिका कोई आदर्श नहीं है, तो जितना शीघ्र हम अपने सामने कोई आदर्श रक्खें, उतना ही अच्छा है।

हमें इस बातका दृढ संकल्प कर लेना चाहिए कि हम अपने आत्म-मन्दिरको, शरीरको, हर तरहसे इतना सुन्दर तथा प्रतिभाशाली बनायेंगे जितना कि सम्भव है। हमें इस बातका विश्वास रखना चाहिए कि शरीरसम्बन्धी पूर्ण स्वास्थ्य, योग्यता और सौन्दर्य आदि हमारे हैं। हमें हरएक उपायसे अपने शरीरको ऐसा पवित्र तथा सुन्दर बनाना चाहिए जैसा कि आत्मा जैसी पवित्र वस्तुके वास्ते होना आवश्यक है, जिससे आत्मा सुखी तथा दूसरोंके लिए सुखदायक हो सके।

जो स्त्री-पुरुष अपनी शारीरिक संस्कारकी उपेक्षा करते हैं, शारीरिक उन्नतिकी तरफसे बेपरवाह रहते हैं, वे कभी व्यक्तित्वको प्राप्त नहीं कर सकते।

दृढ विचार-शक्ति तथा उच्चादर्शसे हम अपनी शारीरिक अवस्थाको इतना अच्छा बना सकते हैं, जिसके बारेमें बहुतसे आदमी विश्वास भी नहीं करते। यदि राममूर्तिके करतब लोग अपनी आँखों न देखते, तो बहुतसे आदमी उसके बलकी बातोंको गप्प ही कहते, उसपर विश्वास न करते।

दुर्बलसे दुर्बल आदमी भी अपनी विचार-शक्ति तथा दृढ संकल्पसे अपने आपको कितना बलवान् बना सकता है, इस बातको पाठक इस घटनासे समझ जायेंगे। एक लड़की थी। वह बड़ी ही नाजुक थी। जिस मकानमें वह रहती थी, उसमें स्वच्छ वायुकी पहले ही कमी रहती थी, इसपर वह लड़की सोते समय तमाम दरवाजों तथा खिड़कियोंको खूब बन्द कर लेती थी। इससे स्वच्छ हवाकी कमी हो जाती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि वह पीली पड़ गई और कमज़ोर हो गई। तपेदिकके कुछ कुछ चिह्न दिखाई देने लगे। जब वह बहुत अधिक बीमार हो गई, तब डाक्टरोंने भी जबाब दे दिया। कहींसे लड़कीके कानमें भी अपने जीवनके संकटमें होनेकी खबर पहुँच गई। सौभाग्यसे तभी लड़कीके अन्तस्तलमें कुछ ऐसा प्रकाश तथा ज्ञान उत्पन्न हुआ कि लड़कीके होठोंपर

डाक्टरोंकी बातसे एक हलकासी मुसक्यान आगई। उसने उसी समय अपने हृदयमें यह दृढ विश्वास कर लिया कि अब वह अधिक दिन बीमार न रहेगी, शीघ्र ही स्वस्थ हो जायगी। इस विचार-परिवर्तनका फल यह हुआ कि वह बहुत ही शीघ्र अपने आदर्शके अनुसार स्वस्थ हो गई, वह अपने आदर्शकी जीती जागती मूर्ति बन गई और सुखी जीवन बिताने लगी। अपने आदर्शपर डटे रहने, उसपर सब अवस्थाओंमें विश्वास करने और उसे कभी न छोड़नेका ही यह सब फल है। जो बात एक आदमीके लिए सम्भव है, वह सबके वास्ते सम्भव है।

आदमीके अस्तित्वका आधार उसके विचार ही हैं और वह सब वस्तुओंको इसी लिए प्राप्त करता है कि वह है। इस लिए सब वस्तुओंकी प्राप्तिका आधार आदमीके विचार ही हैं।

१०—मानसिक संस्कार

" मनको दृढ़ बनानेकी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि शरीरकी पुष्टिके वास्ते भोजन करनेकी जरूरत है । " —सिसरो ।

" अधिकतया पुस्तकावलोकनके द्वारा ही हम उत्कृष्ट हृदयोंवाले आदमियोंके सत्संगका आनन्द उठाते हैं और सत्संगके ये अनमोल साधन सब आदमियोंकी पहुँचमें हैं । उत्तम उत्तम पुस्तकोंसे हमें बड़े बड़े महात्माओंके उपदेश बिना किसी रोक-टोकके मिलते हैं और इनके विचार बड़ी अच्छी तरह मालूम होते हैं । इन पुस्तकोंके द्वारा हममें नये जीवनका संचार हो जाता है । पुस्तकोंके अस्तित्वके वास्ते परमात्माका धन्यवाद करना चाहिए । वास्तवमें पुस्तकें तो प्राचीन कालके स्वर्गीय महात्माओंकी आवाजें हैं और इनके द्वारा हम प्राचीन कालके आध्यात्मिक जीवनके मालिक बन जाते हैं । जो आदमी उन्हें श्रद्धाके साथ इस्तेमाल करते हैं, उन सबको मानव जातिके उत्कृष्ट तथा श्रेष्ठ महात्माओंके आध्यात्मिक सत्संगकी प्राप्ति हो जाती है । " —चैनिङ्ग ।

शारीरिक संस्कार चाहे कितना भी जरूरी क्यों न हो, यह बात हमें अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि वह मानसिक संस्कारका स्थान कभी ग्रहण नहीं कर सकता । एक सुगठित शरीर एक संस्कृत मनके विना निस्सन्देह एक खोखला पिंजर ही है । चाहे वह शरीर पहली बार देखनेपर कितना ही अच्छा क्यों न लगे, परन्तु उसका प्रभाव टिकाऊ नहीं होता, अल्पकालिक ही होता है । उसकी शक्ति बहुत कम समय ठहर सकती है । चाहे कोई आदमी कितने ही सुन्दर शरीरवाला हो, उसके वास्ते दृढ़ व्यक्तित्वको प्राप्त करना तबतक सम्भव नहीं है, जब तक कि उसके पास एक संस्कृत तथा सुन्दर मन नहीं है ।

एक संस्कृत मनसे हमारा अभिप्राय केवल एक विद्वान् आदमीके मनसे नहीं है । विद्वत्ता और संस्कृति (Culture) में बहुत बड़ा अन्तर है, आकाश पातालका भेद है । क्या हम सब ऐसे

बहुतसे आदमियोंको नहीं जानते जिन्होंने स्कूलों तथा कालेजोंकी बहुतसी परीक्षाएँ पास की होती हैं, पर जिन्हें हम संस्कृत नहीं कह सकते? उन्हें तो कोई भी आदमी 'वास्तवमें शिक्षित' न कहेगा। बहुतसे ऐसे स्त्री पुरुष देखे गये हैं जो कि अपने नामोंके पीछे बड़ी बड़ी डिगरियोंके पुछल्ले लगाये फिरते हैं, परन्तु जिन्हें कोई भी आदमी संस्कृत नहीं कह सकता। विपरीत इसके ऐसे भी आदमी देखे गये हैं जिन्होंने स्कूलोंमें बहुत ही कम शिक्षा पाई है, परन्तु जो वास्तवमें संस्कृत थे। उनके मन पवित्र, तथा संयत थे। उनके हृदयोंमें महात्माओंके ज्ञानका प्रकाश और कवियोंका दिव्य संदेश लबालब भरा होता था। उनकी जिह्वाओंपर माधुर्य तथा सरस्वतीका निवास था।

कई बार यात्रा तथा सम्मेलन आदिमें हमें जिन आदमियोंकी बातोंसे बहुत बड़े ज्ञान तथा उत्साहप्राप्तिकी आशा होती है, उनसे बड़ी ही निराशा होती है। उन्हें अपने देशके विद्वानों आदि-के सम्बन्धमें कुछ भी ज्ञान नहीं होता। किसीका नाम उनके लिए अपरिचित होता है, कुछके बारेमें उन्होंने केवल कुछ सुना होता है, किसीकी पुस्तकोंको उन्होंने साधारण तौरसे देखा होता है। एक एम० ए०, एल एल० बी० का विद्यार्थी भारत-मंत्रीका नाम न जानता था और एक ग्रेज्युएट यह नहीं जानता था कि रेमज़े मकडानल्ड कौन हैं। ऐसे आदमियोंके साथ पल्ला पड़नेपर उनसे साधारण राजी खुशीकी बातें करके ही समय बिताना होता है और अपनी महती निराशाको छुपाना पड़ता है।

विद्वत्ता एक अच्छी चीज है और हरएक आदमीके हृदयमें उसको प्राप्त करनेकी तीव्र आकांक्षा होनी चाहिए; किन्तु दृढ व्यक्तित्व-प्राप्तिके वास्ते यह अकेली काफी नहीं होती, इसके साथ साथ संस्कार (Culture) भी होना चाहिए। विद्वत्ता और संस्कारमें भेद है। विद्वत्ताका सम्बन्ध मस्तिष्क, दिमाग, से है। यह ठीक बातोंका ज्ञान है और आज कलकी प्रचलित व्याख्याके अनुसार किताबी बातोंको घोक लेना है, रट लेना है। इसका

यह मतलब होना जरूरी नहीं है कि ऐसा विद्वान् सभ्य और संयत भी बन गया हो। संस्कारका सम्बन्ध आत्मासे होता है। यह सत्यको एकत्रित करना है और अन्तरंग ज्ञानका भाण्डार भरना है। यह अपने सामयिक विचारोंका गहरा तथा हार्दिक परिचय होता है और प्राचीन तथा नवीन कालके महान् विचारकों तथा लेखकों, कवियों तथा फिलास्फरों, और आत्मज्ञानियों तथा ऋषियोंका सत्संग होता है। शिष्टाचार, कृपा, सहानुभूति, सभ्यता, सद्व्यवहार, प्रतिभा और आत्म-संयम सदा संस्कारके साथ रहते हैं। जहाँ संस्कार होता है, वहाँ उपर्युक्त सद्गुण भी अवश्य होते हैं।

पति-पत्नीके मानसिक संस्कार न मिलनेका जो नतीजा होता है, उसको नीचेकी रोचक किन्तु सहानुभूतिपूर्ण घटनाद्वारा अच्छी तरह समझा जा सकता है।

एक विद्वान् नवयुवकने एक आदर्श स्वास्थ्यवाली लड़कीसे विवाह कर लिया। उसने सोचा कि उसे अपने हृदयके भावोंके अनुकूल एक सहचरी मिल गई और अब उसकी समस्त आशाएँ पूर्ण हो जायँगी। इत्तेफाकसे उन्हीं दिनों कवि-सम्राट टैनीसनका देहान्त हुआ था। उस नवयुवकने अपनी धर्म-पत्नीसे बातचीत आरम्भ करनेकी मन्शासे कहा कि क्या तुम्हें मालूम है कि आज कवि-सम्राट् (Poet Laureate) का देहान्त हो गया है? उस लड़कीने उत्तर दिया कि कवि-सम्राट क्या होता है? यह किस चिड़ियाका नाम है? जब उसे टैनीसनका नाम बताया गया, तब भी उसने बड़े ही आश्चर्यके साथ पूछा कि टैनीसन था कौन? लड़केके हृदयको बड़ा धक्का लगा, वह चुप हो गया और आगे कुछ न बोला। एक बार जब वह नवयुवक अपने किसी मित्रसे अपनी धर्म-पत्नीका जिकर कर रहा था, तब उसने कहा कि मुझे तो एक सच्चे साथीकी आवश्यकता थी, केवल अपने घरका प्रबन्ध करनेवाली और अपने बच्चोंका पालन-पोषण करनेवाली स्त्रीकी जरूरत न थी।

सचमुच जीवनके लिए एक सुयोग्य साथीका मिलना बड़ी ही कठिन बात है, और जहाँ ऐसा नहीं होता, वहाँ उस नवयुवकके समान सबको निराश ही होना पड़ता है।

विद्वत्ता और संस्कारमें दूसरा भेद यह है कि विद्वत्ता विद्यालयोंमें पुस्तकें रटने, किताबी शब्दोंसे अपने दिमागोंको भरने और अध्यापकोंके कठोर शासनमें कुछ वस्तुज्ञान प्राप्त कर लेनेका फल है। परन्तु संस्कार स्वेच्छासे सब वस्तुओंके भावकी तहमें पहुंचने और उनके रहस्यको गहराई तक जानेका नाम है। वस्तुओंका रहस्य भिन्न भिन्न प्रकारसे समझा जा सकता है। वह अपने आसपासकी भिन्न भिन्न प्राकृतिक वस्तुओंसे समझा जा सकता है, या काव्य, न्याय, धर्मशास्त्र, विज्ञान और आचार-शास्त्रका अध्ययन करनेसे प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु यह शिक्षणसे प्राप्त नहीं होता, यह तो अपने भीतरसे ही, श्रुतिज्ञान-से या अपने भीतरी प्रकाशसे ही प्राप्त होता है। भीतरी प्रकाश आदमीको अपने प्रयत्न और भक्तिसे, सत्य-प्रेम और उसकी तीव्र अभिलाषासे, रटन्त विद्याकी नहीं किन्तु वास्तविक ज्ञानकी पूजा और उसकी इच्छासे, और उस परमात्माकी महती पूजासे प्राप्त होता है जो कि श्रेष्ठ, सच्चा तथा सुन्दर है।

हम एक महान् युगमें रहते हैं। प्राचीन काल चाहे कितना ही अच्छा हो, परन्तु हमारे पूर्व पुरुष ऐसी बहुतसी बातोंसे वञ्चित थे, जिन्हें हम भोग रहे हैं। उनके अधिकार बहुत परिमित थे। उदाहरणके लिए सस्ते साहित्यको ही ले लीजिए। आज कल जब कि पुस्तकें बहुत सस्ती तथा सुलभ हैं और बड़े बड़े विचारकों-की पुस्तकोंके सस्ते संस्करण खरीदे जा सकते हैं, तब हमारे मनोंके संस्कारहीन रहनेका कोई कारण नहीं हो सकता, कोई बहाना नहीं हो सकता। यह बात बड़ी ही सच्ची है कि संस्कार-प्राप्तिके साधनोंमें पुस्तकोंका बहुत बड़ा स्थान होना चाहिए, क्यों कि उनमें मनुष्यकी बुद्धिमत्तापूर्ण बातोंका बड़ा ही अच्छा संग्रह रहता है।

आज दिन इतना दरिद्री कोई भी आदमी नहीं है जो कि एक अच्छे पुस्तकालयका स्वामी न बन सके*। सब ही आदमी प्राचीन कालके बड़े बड़े विचारकोंके विचारोंसे लाभ उठा सकते हैं। जो आदमी संस्कार तथा प्रकाश-प्राप्तिके इच्छुक हैं, उन्हें अब अज्ञान तथा अंधकारमें न रहना चाहिए। परन्तु यह बात बड़े ही शोकके साथ कहनी पड़ती है कि आज दिन सुख और भोगकी पूजा अधिक होती है। हमारा बहुतसा धन उन वस्तुओंके खरीदनेमें खर्च होता है, जो न हमारे हृदयोंको समुन्नत करती हैं और न हमें संतोष देती हैं। बहुतसे नवयुवक तथा आदमी कह दिया करते हैं कि हम पुस्तकें खरीदनेमें असमर्थ हैं। किन्तु यदि उन्हीं आदमियोंके एक सालके पान, तम्बाकू और अन्य व्यर्थ बातोंके खर्चको देखा जाय, तो मालूम हो सकता है कि वे इतने असमर्थ नहीं हैं जितने कि अपने आपको प्रकट करते ह या जितने गरीब वे अपने आपको समझते हैं। उन्हें यह बात स्वीकार करनी होगी कि उस खर्चेसे बचे हुए पैसोंसे वे बहुत जियादा पुस्तकें खरीद सकते थे और उनके पास पुस्तकोंका एक अच्छा संग्रह हो सकता था। प्रिय पाठको, यदि आप पान, तम्बाकू खाने-पीने और तमाशे देखनेको संस्कार-प्राप्तिसे अच्छा समझते हैं, तो आपको अपनी इच्छापूर्ति और अपनी मनचाही वस्तुको खरीदनेका पूरा अधिकार है। परन्तु फिर आप उस समय दुखी मत होना जब कि दूसरे आदमी संसारकी दौड़में तुमसे आगे बढ़ जायँ और पुरस्कार-प्राप्त करनेको हाथ बढ़ायें। किन्तु यदि आप इस दुखसे बचना चाहते हैं, और अपने आपको संसारमें सबसे आगे देखना चाहते हैं, तो प्रतिदिन अपने खर्चमेंसे कुछ पैसे बचाओ और उनसे उप-

* यूरुप अमेरिका आदिके सम्बन्धमें चाहे यह बात ठीक हो कि वहां कोई भी आदमी इतना गरीब नहीं है, जो एक अच्छे पुस्तकालयका स्वामी न बन सके; परन्तु हमारे देशमें तो कई करोड़ आदमियोंको भर पेट भोजन भी नहीं मिलता, फिर पढ़ना तथा पुस्तकें खरीदना तो बहुत बड़ी बात है। —अनुवादक।

योगी तथा अच्छी पुस्तकें खरीद कर पढ़ो, उनपर अमल करो और अपने जीवनको समुन्नत बनाओ।

जो आदमी लगातार उपन्यास पढ़ते रहते हैं, और जिनकी उपन्यास पढ़नेकी आदत बहुत पुरानी हो गई है, वे प्रायः संस्कृत (Cultured) नहीं होते। अच्छे उपन्यास लिखना वास्तवमें एक महान् कला है और इस कलामें बहुत ही कम आदमी सिद्धहस्त होते हैं। यही कारण है कि आजकल प्रकाशित होनेवाले बहुतसे उपन्यास, कुछको छोड़कर, साधारण, अश्लील और जनाने होते हैं। जो आदमी आजकल दो तीन उपन्यास एक सप्ताहमें पढ़ डालते हैं, वे प्रायः कम गहराई तक विचार करनेवाले, साधारण तौरसे सोचनेवाले, कम गम्भीर और महत्त्वहीन होते हैं। अथवा ऐसे आदमी अदूरदर्शी, शीघ्र भड़क उठनेवाले और वास्तविक जीवनसे बहुत दूर रहनेवाले होते हैं। इस प्रकारके पठनको संस्कृति समझना भयंकर भूल है। विशेषकर ऐसे उपन्यासोंके पठनको संस्कृति समझना तो और भी बड़ी भूल है, जिनमें चरित्रों (Characters) को उच्च स्थितिमें स्वीकार किया जाता है और जिनका प्लाट उच्च जीवनमें रक्खा जाता है। अधिकतया ऐसे उपन्यास अप्राकृतिक, हानिकारक, जोशको भड़कानेवाले और पतित भावों तथा नीच विषय-वासनाओंको प्रिय होते हैं। खराब उपन्यासोंके पढ़नेसे आदमीकी विषय-वासनाएँ जाग्रत हो जाती हैं। इनसे भी खराब वे उपन्यास होते हैं, जिन्हें प्राय धार्मिक कहा जाता है। यूरुप आदि देशोंके बारेमें बहुतसे आदमियोंका यह विश्वास है कि वहाँ स्त्रियोंमें उपन्यास पढ़नेका खब्त पुरुषोंके शराब पीनेके खब्तसे भी बुरा है। और इसका फल बहुतसे कुटुम्बोंका सर्वनाश और गार्हस्थ्य सुखका लोप हुआ है। वहाँ ऐसी बहुतसी स्त्रियाँ होती हैं, जो घण्टों उपन्यास पढ़ती रहती हैं और घरके आवश्यक कामोंको उपन्यास पढ़नेकी तरंगमें सर्वथा भुला देती हैं। इस देशमें भी ऐसे बहुतसे उपन्यास-पाठक देखे गये हैं, जो कहानीके रसके लिए और 'आगे क्या होता है' यह जाननेके लिए

उपन्यास लेकर घर-बार और अपने काम-काज सबको भूल जाते हैं। उन्हें उपन्यास पढ़नेकी ऐसी बुरी आदत हो जाती है कि चलते चलते भी वे पढ़ते ही रहते हैं। ऐसे कई आदमियोंको दूसरे आदमियोंसे भिड़ते और ठोकर खाकर गिरते देखा गया है। इस प्रकारके अध्ययनको क्या संस्कार-प्राप्ति या व्यक्तित्व-प्राप्तिका साधन कहा जा सकता है?

इस बातको फिर दुबारा कहा जाता है कि मानसिक संस्कार हरएक आदमीकी पहुंचमें है। किन्तु इसकी प्राप्तिका प्रश्न व्यक्तिगत है। इसका प्रश्न हल करनेके लिए प्रत्येक अवसरको ग्रहण करने तथा उसका उत्तम प्रयोग करनेका दृढ संकल्प होना चाहिए। किसी आदमीका मन संस्कृत है या नहीं, इस बातको जाननेके लिए यह बात मालूम कर लेना पर्याप्त है कि वह आदमी अपना खाली समय किस प्रकार व्यतीत करता है। हमें यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि संसारके बहुतसे बड़े बड़े विचारक और लेखक जिन्होंने संसारपर बड़े भारी प्रभाव डाले हैं और जिन्होंने इतिहासमें अपने नाम अमर कर दिये हैं, बड़े विद्वान् नहीं थे। उनमेंसे कईको बारहसे चौदह घण्टे प्रतिदिन कठोर परिश्रम करना पड़ता था। और फिर भी उन्होंने अपने अवकाशके समयको ठीक तौरसे काममें लाकर अपने आपको सच्चे रूपसे शिक्षित और संस्कृत बनानेका अवसर पैदा कर लिया।

यदि आप दृढ व्यक्तित्व पानेकी इच्छा रखते हैं, यदि आप अपने जीवनको प्रभावशाली बनाना चाहते हैं, यदि आप संसारमें अधिक समुन्नत होनेकी शुभेच्छा रखते हैं और यदि आप अपने साथियोंकी सच्ची सहायता तथा देश, समाज, विश्व और सच्चे धर्मकी कुछ सेवा करना चाहते हैं, तो अपने मनको सच्चे रूपसे संस्कृत तथा शिक्षित बनाओ और उत्कृष्ट तथा उन्नति करनेवाला साहित्य पढ़ो। यदि आपने अभी तक यह काम आरम्भ नहीं किया है, तो शीघ्र कर दो। फिर यदि पुस्तक खरीदनेके लिए आपको एक समय निराहार भी रहना पड़े, तो भी आप घाटेमें

न रहेंगे। आपका मन आपके शरीरको बहुत ही सात्विक और पुष्ट भोजन देगा। कभी कभी भोजनका त्याग आत्मा और शरीरके वास्ते उपयोगी भी होता है।

साहित्यिक संसार आपके वास्ते अच्छी, पढ़ने योग्य और उत्कृष्ट पुस्तकें लिये तय्यार है। आप उन्हें थोड़ेसे मूल्यपर प्राप्त करो और अपने आदर्शकी ओर पहुँचनेके वास्ते कदम बढ़ाओ।

यह बात कभी मत भूलो कि जबतक आप विचार नहीं करते, तबतक केवल पढ़ना ही अधिक लाभदायक नहीं है। पढ़नेके साथ स्वयं सोचना, मनन करना और उसे पचाना भी जरूरी है। फिर जो कुछ आप प्राप्त करो, उसे अपने जीवनका एक भाग बनाओ और उसको अमली जामा पहनाओ। उसे अपने हृदय-पटपर अंकित कर लो। भावी इस्तेमालके वास्ते इसे निधि समझकर संचित करो और इस प्रकार महान् हृदयोंके विचारों, अनुभवों और भावोंको अपना लो। किन्तु यह काम एक तोतेके समान रट-कर किसी दूसरेके मनको रिझा देनेके लिए अथवा किसी दूसरे अवसरपर फर फर सुना देनेके वास्ते नहीं होना चाहिए। इस पठनका यह मतलब भी न होना चाहिए कि आप यह अभिमान करने लगें कि हमने बहुत पढ़ लिया है। परन्तु आपको इस समस्त ज्ञानसे अपने जीवन और जीवनके व्यवहारको बनाना चाहिए। प्राचीन अद्भुत महात्माओं और प्रभावशाली व्यक्तियोंके अनुभवों-को अपने जीवनमें व्यवहार रूपसे परिणत करके अपने गाम्भीर्य-शक्ति और व्यक्तित्वको बढ़ानेका प्रयत्न करना चाहिए।

११—नैतिक संस्कार

" किसी आदमीके चरित्र-बलको उसके उन प्रयत्नोंसे नहीं मापना चाहिए जो कि वह दबाव पड़नेपर करता है, वरन् उसके साधारण व्यवहारसे ही उसके चरित्र-बलको जाँचना चाहिए ।"

—पैसल ।

" दूसरे आदमियोंसे अपने प्रति जिस व्यवहारकी तुम आशा करते हो, वैसा ही व्यवहार तुम उनसे करो। यही महान् नियम है और यही महात्माओंका उपदेश है।"

—ईसा मसीह

किसी आदमीको यह कभी न सोचना चाहिए कि मानसिक संस्कार नैतिक संस्कारका स्थान ले सकता है। यह कहा जा सकता है कि संस्कृत मनवाला एक आदमी अवश्य नीतियुक्त होता है। और यह बात ठीक भी है, क्योंकि जो मानसिक संस्कार आदमीके जीवन और व्यवहारमें प्रवेश नहीं करता, उसको संस्कारका नाम कठिनतासे दिया जा सकता है। जब तक संस्कार किसी मनुष्यके प्रत्येक कामको चरित्रके उच्चादर्शोंके अनुसार नहीं बनाता, तबतक वह मुलम्मेके समान ऊपर ही रहता है, तहतक नहीं पहुंचता। ऐसा संस्कार झोलकी तरह ऊपर ही रहता है और जीवनका अंश नहीं बनता। इमर्सनका कथन है कि केवल वही आदमी ठीक है, जिसका इरादा अच्छा है। संस्कारका उद्देश्य इसको नष्ट करना नहीं है, वरन् इसकी सब त्रुटियोंको दूर करके केवल शुद्ध शक्तिको रहने देना है।

हमारे सभी संस्कार प्रकट होने चाहिए, वे गुप्त अथवा अप्रकट न रहने चाहिए। एक सुन्दर, सुगठित और स्वस्थ शरीरद्वारा शारीरिक संस्कार प्रकट होना चाहिए। मानसिक संस्कार आदमीके मनसे प्रकट होता है और उसके मनकी छाप उसके प्रत्येक काम, बात और लेखपर लगी रहती है। संस्कारयुक्त आदमी अपने आपको छुपा नहीं सकता। यदि वह ऐसा करना भी चाहे, तो भी अपने मनकी श्रेष्ठता और संस्कारको नहीं छुपा सकता।

क्योंकि दूसरे सभी संस्कृत मनोंसे अध्ययन तथा सत्संगद्वारा उसका मेल है। वह अवश्य ही प्रकट हो जाता है। ज्यों ही हम ऐसे आदमीके सामने आते हैं, त्यों ही हमारे हृदयोंमें कुछ ऐसा प्रकाश पैदा होता है, जो हमें उन समस्त श्रेष्ठ बातों-की याद दिला देता है जो कि हमने पुस्तकोंमें पढ़ी हैं। उनके सम्पर्कसे हमें अपने जीवनकी समस्त महती आकांक्षाओं और आत्माके महान् संगीतका फिरसे अनुभव होते लगता है और इन सब बातोंसे हम अपने हृदयोंमें यह बात अनुभव करने लगते हैं कि जिस आदमीके पास इस समय हम बैठे हैं, वह वास्तवमें संस्कृत है।

नैतिक संस्कार आदमीके व्यवहार और बड़ेसे लेकर छोटे काम तकमें प्रकट होता है। आदमीकी दृष्टियोंसे, उसके सहसा तथा अनजानमें किये हुए कामों तथा व्यवहारोंसे, उसके चेहरेकी प्रत्येक आकृतिसे, उसकी आवाजके उतार-चढ़ावसे और उसकी प्रत्येक चाल-ढालसे उसका नैतिक संस्कार जाहिर हो जाता है। इन बातोंसे बुद्धिमान् आदमी किसी आदमीके नैतिक संस्कार-को मालूम कर लेते हैं। परन्तु जिस गलती न करनेवाले अंगसे अथवा इन्द्रियसे हम इन सब बातोंको अनुभव करते हैं और जिसके द्वारा हम किसी आदमीकी नैतिकताका पता लगाते हैं, वह हम सबके पास है। इसको ठीक तौर से वर्णन नहीं किया जा सकता। इमर्सनने क्या ही ठीक बात कही है कि "प्रकृति प्रत्येक रहस्यको एक बार प्रकट करती है। परन्तु आदमीके रह-स्यको वह हर समय उसकी चाल-ढाल, व्यवहार, मुख तथा मुखके प्रत्येक अंगकी आकृति और समस्त शरीरके हाव-भाव तथा कामोंसे प्रकट करती रहती है।" यह आदमी नीतियुक्त है?—यह पूछनेकी आवश्यकता नहीं है। ज्यों ही हम उसके सम्पर्कमें आते हैं, त्यों ही जान जाते हैं कि वह आदमी कैसा है। यदि शारीरिक संस्कारके चिह्नोंसे ठीक पता लग जाता है, कोई भूल नहीं होती है और यदि मानसिक संस्कारको छुपाया नहीं जा सकता है, तो नैतिक संस्कार क्यों अधिक अनुभव नहीं किया जा सकता?

उसे भी हम अवश्य अनुभव कर लेते हैं, वह भी गुप्त नहीं रह सकता। नैतिक संस्कारयुक्त व्यक्तिके पास हम एक शक्ति अनुभव करते हैं। आदमीका नैतिक संस्कार ही हमें उसकी तरफ खींचता है। नैतिक संस्कार ही हमें गाम्भीर्य और प्रभुत्व प्रदान करता है। चाहे कोई पुरुष शारीरिक रूपसे कितना ही हृष्ट पुष्ट और सुडौल हो, चाहे कोई स्त्री सुगामिनी और सुन्दर हो और चाहे वे सब समयोंके महापुरुषोंके विचारों और ग्रंथोंसे परिचित भी हों, किन्तु यदि वे नीतिवान् और चरित्रवान् नहीं हैं, तो संसारके किसी उपयोगके नहीं हैं। संसारके आदमी उनकी कभी प्रशंसा नहीं करते, वे उनकी उपेक्षा ही करते हैं। जनता उन्हें भूल जाती है और वे संसारके मृत आदमियोंकी तरह विस्मृत हो जाते हैं। परन्तु नैतिक संस्कार—जिसे चारित्रिक संस्कार भी कहा जा सकता है—महान् शक्तिशाली और बहुत दूर तक प्रभाव डालनेवाला होता है। इसकी व्याख्या व्यक्तिगत पवित्रतामें ही परिमित नहीं है, क्यों कि वह तो इसका एक बहुत छोटासा भाग है। नैतिक संस्कार आदमीके सब व्यवहारों तथा समस्त कामोंमें झलकता रहता है और इसका रंग आदमीकी सब क्रीड़ाओंपर चढ़ा रहता है। यह आदमीके व्यापार और पेशेमें भी अपना काम करता रहता है और उसके काम और खेलके प्रत्येक क्षणपर अपना प्रभाव डालता रहता है। यह आदमीके समस्त सम्बन्धों और अपने नौकरों, मुनीमों, कारकूनों तथा दलालोंके साथ होनेवाले उसके व्यवहारोंका आधार है। उसके पड़ोसियों और उसके कुटम्बियोंसे भी आदमीके नैतिक संस्कारका काम पड़ता रहता है। जिस आदमीका अपने घरमें तो कुछ चलन है और व्यापार तथा समाजमें कुछ और ही चलन है, ऐसा आदमी चाहे अपने आपको कुछ भी क्यों न कहे, परन्तु उसे नैतिक संस्कारयुक्त आदमी कठिनतासे कहा जा सकता है।

छोटे छोटे कामोंमें भी नीतियुक्त व्यवहार करना निस्सन्देह नैतिक संस्कारका एक ठीक चिह्न है। हमें यह कभी न भूलना

चाहिए कि जिन बातोंको हम छोटी समझते हैं, उनसे ही नैतिक संस्कारके अस्तित्व अथवा अभावको ताड़ लिया जाता है। छोटे छोटे काम ही उसकी जाँचकी कसौटी समझे जाते हैं। एक आदमी ताश आदि खेलते समय बेईमानी करनेके भावको बुरा समझता है; परन्तु वही आदमी अपने कार-व्यवहार और लेन-देनमें अपने स्वार्थोंका ख्याल रखनेको बुरा नहीं समझता। एक आदमी अपने पड़ौसीका ऋण न चुकाना अपनी इज्जतके विरुद्ध समझता है, परन्तु वही आदमी अपने पड़ोसीके सम्बन्धमें बेपरवाहीसे गलत बातें कहकर अथवा दुःखप्रद विचार प्रकट करके उसके नामपर धब्बा लगा देता है। एक आदमी अपने पड़ौसी अथवा मित्रकी किसी वस्तु या रुपयोंको चुरानेके विचार मात्रसे काँप उठेगा: परन्तु वही आदमी उनके विषयमें उनकी अनुपस्थितिमें, किसी सभा-सोसायटीमें कुछ बातें कहकर उन्हें बदनाम करता हुआ न झिझकेगा। एक आदमी किसी भी जीवको दुःख देना बुरा समझता है: परन्तु हँसी मज़ाकमें वही आदमी कभी कभी वाक्प्रहार कर बैठता है, जो अत्यंत दुःख देनेवाले होते हैं और जिन्हें कभी नहीं भूला जा सकता। कहनेका अभिप्राय यही है कि इन्ही छोटी छोटी बातोंमें नैतिक संस्कारकी आवश्यकता है। छोटेसे छोटे काममें भी हमें इसका ध्यान रखना चाहिए।

कोई स्त्री या पुरुष स्वयं चाहे नैतिक जीवन व्यतीत न करते हों, परन्तु वे भी एक नीतिवान् तथा चरित्रशील आदमीका सम्मान और प्रशंसा करेंगे। सचमुच जब आदमी नीतिवान् आदमियोंको देखते हैं, तब उन्हें महत्ताके दरजोंका बोध होता है, अर्थात् नीतिवान् आदमियोंको देखकर ही आदमी यह समझते हैं कि महत्ताके बहुतसे भेद—दरजे—(Degrees)—हैं। वास्तवमें एक नीतिवान् आदमी जनताके हित तथा रक्षामें हर समय लगा रहता है। वह सबकी रक्षा करना चाहता है और यथाशक्ति प्रयत्न करता है। चाहे ऐसा आदमी अपनी जबानसे उपदेशार्थ एक शब्द भी न निकाले, तो भी उसकी उपस्थिति जनताके हृदयोंमें न्याय, सत्यता, पवित्रता, सौन्दर्य्य, सुख, तथा शांति

और उस प्रेमके निर्मल भावोंको निरंतर जाग्रत करती रहती है, याद दिलाती रहती है जिसमें किसीके भी अहितका भाव नहीं है। इमर्सनका कथन है कि "ऐसे आदमी समाजके अन्तःकरण हैं।" वे उसे उचित तथा अनुचित और नीतिपूर्ण तथा अनीतिपूर्ण बातोंका बोध कराते रहते हैं। वे बताते रहते हैं कि समाज तथा राष्ट्रके लिए ठीक मार्ग कौनसा है। जिस प्रकार आदमीका अन्तःकरण उसे बुरे काम करनेसे रोकता है और अच्छे काम करनेकी प्रेरणा करता रहता है, ठीक उसी प्रकार नीतिवान् पुरुष समाजको चेतावनी देते रहते हैं। इमर्सन आगे कहता है–"ऐसा आदमी चाहे सोया हुआ भी हो, वह वायुमण्डलको पवित्र करता दिखाई देता है। वह देशके नियमोंको शक्ति प्रदान करता मालूम होता है और उसका घर पृथिवीकी शोभा बढ़ाता हुआ दिखाई देता है।" अच्छी और संस्कृत स्त्रियोंके बारेमें भी इमर्सन आगे कहता है कि "क्या ऐसी स्त्रियाँ नहीं हैं कि जिनकी पवित्रता तथा प्रेमके उच्च भावोंसे हमारा घर लबालब भरा रहता है? जो हमें शिष्टाचारके भावोंसे प्रोत्साहित करती हैं और जो हमें बोलना तथा देखना सिखाती हैं? ऐसी भद्रा तथा सुसंस्कृत माताओंके जीवनका ही अच्छा प्रभाव सन्तानको दुनियामें यशस्वी और प्रतापी बनाता है। इतिहासमें इस बातको सिद्ध करनेवाले बहुतसे उदाहरण मिलते हैं।"

किसी आदमीके विषयमें यह जानना ही कि वह आदमी संसारके वास्ते आवश्यक तथा उपयोगी है, उस आदमीका बड़ा भारी सम्मान है। उसकी बातोंका सत्य माना जाना और उसके कामोंका ठीक होना भी उसका बड़ा भारी आदर है। नैतिक संस्कार ही ऐसी अपूर्व शक्तिका मूल है। इस पुस्तकके आरम्भसे जो कुछ अबतक कहा गया है, वह समस्त सद्‌गुणोंके सारके अतिरिक्त और क्या है? इन तमाम सद्‌गुणोंहीसे स्त्री और पुरुष नैतिक संस्कारयुक्त बनते हैं। दूसरे शब्दोंमें इनहीसे आदमी व्यक्तित्वयुक्त अथवा प्रभावशाली बनते हैं।

१२—आध्यात्मिक संस्कार

" जो आदमी अपने मनको परमात्मापर निछावर कर देता है, उस आदमीके मनका सम्बन्ध उसके समस्त कार्योसे हो जाता है और वह अवश्य ही कभी न कभी विशेष ज्ञान तथा शक्तिके राजमार्गपर पहुँच जाता है । " —कस्यचित् ।

" जिन आदमियोंके हृदय पवित्र हैं, वे धन्य हैं, क्यों कि वे अवश्य परमात्माके दर्शन करेंगे । " —कस्यचित् ।

किसी आदमीका नैतिक चरित्र उसके कामों, समस्त व्यवहारों, बातों और चाल-चलनसे प्रकट होता है । किन्तु आदमीका आध्यात्मिक जीवन दूसरे आदमियोंद्वारा अनुभव किया जा सकता है, देखा नहीं जाता । आध्यात्मिक जीवनमें परमात्मीयता आ जाती है और यह उसकी आध्यात्मिकताके फलस्वरूप प्राप्त होती है । यह मनुष्यकी अवर्णनीय शक्ति होती है और इसको वे ही आदमी ताड़ सकते हैं, जो कि स्वयं इस अवर्णनीय शक्तिको रखते हैं ।

हम उस आदमीको आध्यात्मिक आदमी स्वीकार नहीं कर सकते जो कि धर्म और धार्मिक सिद्धान्तोंके बारेमें खूब बढ़-चढ़कर बातें करता है । लोगोंका धर्म-सिद्धान्तोंपर अधिक बातें करना भी हमें पसन्द नहीं है । क्यों कि हम यह जानते हैं कि जब वह आध्यात्मिक विषयोंपर अधिक बातें करता है, तो हमें इस बातमें सन्देह होने लगता है कि जो बातें उसकी जबानपर हैं, उनपर उसका अधिकार भी है या नहीं । हम इस विचारको रोकनेमें असमर्थ हैं, किन्तु फिर भी इसका अर्थ यह नहीं है कि हम धर्मचर्चाका विरोध करते हैं । हम उसकी व्यवहाररहित निरी थोथी चर्चाको उपयोगी नहीं समझते । सच बात तो यह है कि जो आदमी सत्यको समझ लेता है, वह इसके बारेमें वाद-विवाद नहीं करता: क्यों कि वह जान लेता है कि सत्य दलीलों और वाद-

विवादमें नहीं है। वह प्रेमके सम्बन्धमें भी बात नहीं करता; कारण कि उसका जीवन ही सत्यपूर्ण और प्रेममय होता है।

आदमीके उस अंशका नाम आध्यात्मिकता है, जो कि उसकी ध्रुव-स्थायी-शक्ति है। यह आदमीके जीवनका वह गुप्त झरना है जिसका निकास-स्थान तो गुप्त है; परन्तु जिस प्रकार एक झरना छिपाया नहीं जा सकता, ठीक उसी प्रकार आध्यात्मिक शक्तिके झरनेमेंसे निकलनेवाली धारायें उन आदमियोंकी दृष्टिसे नहीं बच सकतीं, जो कि आत्मासे बिना किसी वाणी, शास्त्र और घण्टेके प्रवाहित होती रहती हैं। महात्मा जेम्स एलनने कहा है कि जिस प्रकार पानीका झरना एक गुप्त स्थानसे निकलता है, ठीक उसी प्रकार आदमीका जीवन भी उसके हृदयके गुप्त भागोंसे निकलता रहता है। जेम्स एलनने अपनी कई पुस्तकोंमें उन मार्गोंका उल्लेख किया है, जिनसे आदमियोंकी ये गुप्त शक्तियाँ प्रवाहित होती रहती हैं और हमपर उन आदमियोंकी आध्यात्मिकता प्रकट करती हैं। एक स्थानपर उन्होंने भद्रताको आध्यात्मिक जीवनका सबसे अच्छा लक्षण माना है। एक दूसरे स्थानपर उन्होंने गम्भीरता तथा विनयको पवित्रता तथा बुद्धिमत्ताके निशान बताये हैं। उनके इन शब्दोंका उल्लेख कर देना भी अच्छा होगा,—"सदा सबके प्रति प्रेमसे रहना ही सच्चा जीवन व्यतीत करना है।"

आध्यात्मिक संस्कार पहले तीनों संस्कारोंसे—शारीरिक संस्कार, मानसिक संस्कार और नैतिक संस्कारसे—इस बातमें भिन्न है कि यह एक ऐसी शक्ति, बल अथवा अनुभव है जो कि आदमीकी आत्मामें गुप्त रहता है और केवल भद्रता, प्रेम, नम्रता और परोपकार आदिके रूपमें प्रकट होता है। इन सब गुणोंका निकास-स्थान आध्यात्मिकता ही हो सकता है। इसे नैतिक संस्कारसे जुदा नहीं किया जा सकता है। धर्माचार्य्योंकी यह बड़ी भारी भूल रही है कि उन्होंने नैतिकताका साधारणताके साथ उपदेश दिया। मानों नैतिक आदमी कोई साधारण आदमी है और उन्होंने आध्यात्मिकताको नीतिसे सर्वथा जुदा कर दिया। इस

प्रकारके उपदेशसे संसारमें विकृत और नीतिविहीन आध्यात्मिकताका प्रचार हो गया है। इसका फल यह हुआ है कि वास्तविक जीवनके स्थानपर विश्वास और चरित्रके स्थानपर रूढियाँ बाकी रह गई हैं। प्रत्यक्ष आध्यात्मिकताके बिना कुछ अंशोंमें चरित्र पाया जा सकता है, परन्तु बिना चरित्रके आध्यात्मिकता न कभी हुई है और न कभी होगी। केवल 'ईश्वर' 'ईश्वर' रटनेवाले धर्मात्मा नहीं होते, वरन् वे ही आदमी धर्मात्मा होते हैं जो कि परमात्माके आदेशोंपर अथवा उसके बताये हुए मार्गपर चलते हैं। धन्य हैं वे आदमी, जो परमात्माका उपदेश सुनते हैं और उसके अनुसार आचरण करते हैं।

वास्तवमें आध्यात्मिक संस्कारकी व्याख्या करना एक ऐसे विषयको वर्णन करनेका प्रयत्न करना है, जो शब्दोंद्वारा नहीं बताया जा सकता, अकथनीय है। यह आदमीके हृदयमें निवास करनेवाली वह वस्तु है, जो आदमीको विश्वव्यापी सत्पदार्थको जाननेके लिए तीव्र रूपसे प्रेरित करती है। यह पौद्गलिक तथा सांसारिक पदार्थोंसे भी परे देखनेकी नैसर्गिक इच्छा है। आत्माद्वारा अदृश्य परन्तु सत्, अमर और अनादि वस्तुओंको जानना ही आध्यात्मिकता है और ये वस्तुएँ संसारकी उन पौद्गलिक वस्तुओंसे सर्वथा भिन्न हैं जो कि दिखाई तो देती हैं परन्तु अल्पकालिक और क्षणभंगुर हैं। यह मनकी वह साधना है, जिससे वह परमात्मीय प्रभावको ग्रहण करनेमें समर्थ बन जाता है। यह आत्माको उसके मूल निकास-स्थानसे जोड़ देना है, आत्माको परमात्मामें लीन कर देना है। किसी धर्म-स्थानपर जाना मात्र ही आध्यात्मिक संस्कार नहीं है, यह तो उसकी प्राप्तिके बहुतसे साधनोंमेंसे एक साधारण साधन है। किसी सम्प्रदाय विशेषसे सम्बन्ध करना भी इसका होना सिद्ध नहीं करता, ये तो इसकी प्राप्तिके छोटे या बड़े, सीधे या चक्करदार, मार्ग हैं। आध्यात्मिकताका अर्थ कुछ खास दिनोंमें धर्म कर लेना, व्रत रखना, ईश्वरको भोग लगाना, भजन गाना और प्रार्थनाएँ करना भी नहीं है; ये तो

आत्मशुद्धिके कुछ साधन हैं। एक आदमी पूर्ण जोश और अपनी सारी शक्तिके साथ इन्हें करनेपर भी आध्यात्मिकतासे कोसों दूर रह सकता है, उसे अपनी समस्त आयुमें आध्यात्मिकताका सहस्रांश भी प्राप्त नहीं हो सकता। इस बातको बतानेके लिए किसी बड़ी भारी दलील या युक्तिकी आवश्यकता नहीं है: क्योंकि यह हमारे प्रति दिनके अनुभवकी साधारण बात है। इतना होते हुए भी उपर्युक्त सब बातें—क्रियाकाण्ड आदि—व्यर्थ नहीं हैं। बात यह है कि ये सब आध्यात्मिकता-प्राप्तिके साधन मात्र हैं। परन्तु इनहीको साध्य अथवा लक्ष्य समझ लेना ठीक नहीं है। ये तो अपने ध्येयको प्राप्त करनेकी सीढ़ियाँ मात्र हैं। जो आदमी सीढ़ियोंपर बैठकर ही यह समझ लेता है कि वह अपने ध्येयपर पहुँच गया है, वह भारी भूलमें पड़ा हुआ है। आजकल प्राय सभी धर्मोंके माननेवाले अपने क्रिया-काण्डोंको ही जीवनका लक्ष्य समझते हैं और इससे वे अपने वास्तविक ध्येयसे कोसों दूर रह जाते हैं। क्या इस बातकी आवश्यकता नहीं है कि उन्हें इस भूलसे निकालकर उनके वास्तविक ध्येयकी तरफ़ चलाया जाय?

आध्यात्मिकता कर्मसे बहुत दूर है और बड़ी ही निष्कर्म है, किन्तु समस्त कामोंका स्रोत इसीमें है, यही सबका निकास-स्थान है। यह परम मौन, स्थायी आंतरिक प्रकाशके ज्ञान और मनुष्यके अभ्यन्तरमें निवास करनेवाली शक्ति है। यह प्रत्येक आत्माके भीतर समान रूपसे विद्यमान है। जिस प्रकार यह एक महात्माके हृदयान्तरमें मौजूद है, वैसे ही एक पतितसे पतित वेश्या, शराबी और नास्तिकके हृदयान्तरमें भी विद्यमान है।

जिस खाते पीते और काम करते आदमीको देखकर हम उसे मनुष्य कहते हैं, वह उसका असली रूप नहीं है, वह तो विकृत रूप है। वह तो हाड़ मांसका पिंजर है, आत्मा नहीं है। जब कभी हम उसका आदर करते हैं, तब वह आदर उसके शरीरका नहीं होता, वरन् उस आत्माका होता है जिसके काम करनेका वह

शरीर एक साधन मात्र होता है। काश! वह आदमी अपने सत्-कर्मोंद्वारा अपनी आत्माको–अपने आध्यात्मिक रूपको–प्रकट करे और हमें अपने चरणोंमें बैठने दे।

हम जानते हैं कि एक आदमीमें उसके कामोंसे भी अधिक महान् एक वस्तु है, उसके शब्दोंसे भी कोमल उसमें कोई दूसरी वस्तु है और उसमें एक ऐसी सुन्दर वस्तु है, जिसका स्वयं उसको भी ज्ञान नहीं है। परन्तु जिस समय आदमी उस महान्, कोमल तथा सुन्दर वस्तुसे परिचित हो जाता है, तब आध्यात्मिक संस्कारकी प्राप्तिके वास्ते उसके प्रथम प्रयत्न आरम्भ होते हैं।

जब मनुष्यके आत्मज्ञान हो जाता है, जब वह अपनी वास्तविकता, असलीयत, को समझ लेता है। उस समय वह आदमी समझने लगता है कि परमात्मा और उसके बीचमें कोई रुकावट नहीं है। यह बोध होते ही उसकी समस्त शक्तियाँ आध्यात्मिक उन्नतिके लिए चेतन हो जाती हैं। इस आध्यात्मिक शक्तिके बिना आजतक वह एक प्रकारसे अकेला ही था। किन्तु अब? अब वह अपने आपको परमात्माकी सुखकारी तथा आनन्दमय गोदमें पाता है और अपने आपको अकेला नहीं, वरन् अनन्त रूपमें देखता है।

आध्यात्मिक महान् मौनके अन्तस्तलमेंसे नवजीवनका सञ्चार होता है और फिर उस आदमीके हृदयमें प्रेम, ईमानदारी, सत्यता, कोमलता, संलग्नता, श्रद्धा, भक्ति, उमंग तथा आज्ञा-पालनके भाव उत्पन्न होते हैं। ये सब आत्माके स्वभाविक गुण हैं। ये मनुष्यकी स्थायी शक्तियाँ हैं और उसे इनको प्राप्त करनेका उस समय तक प्रयत्न करते रहना चाहिए जब तक कि उसका समस्त जीवन इनसे न रँग जाय, अर्थात् आदमीके जीवनमें ये सब गुण न आजायँ, और उसके विचारों, शब्दों और कामोंपर इन सब गुणोंकी छाप न लग जाय। इसी बातको हम यों भी कह सकते हैं कि जब तक आदमीके मन, वचन और कर्ममें उपर्युक्त गुण पूर्ण रूपसे न प्रकट हों और उसके व्यक्तित्वपर परमात्मीय शक्तिकी छाप न

लग जाय, तब तक उसे इन गुणोंको प्राप्त करनेका भरसक प्रयत्न करना चाहिए। जिस आदमीमें ये सब गुण मौजूद हैं, वास्तवमें वही आध्यात्मिक आदमी है। इसी वास्तविक जीवनमें वह अपने जन्मसिद्ध अधिकारको प्राप्त करता है और परमात्माके साथ उसके इसी मिलनमें उसकी आध्यात्मिकता है, न कि मतमतान्तरोंसे चिमटते और पूज्य स्थानोंमें पड़े रहनेसे। वास्तविक आध्यात्मिक प्रवृत्तिके उन कुछ आदमियोंके वास्ते ये मत-मतान्तर और पूजा-पाठ आदि सच्चे सहायक और प्रेरक हैं जो कि यह जानकर और समझकर इनका उपयोग करते हैं कि ये किसी गुप्त रहस्य अथवा सच्चाईके सूचक संकेत या चिह्न मात्र हैं। सचमुच यह बड़े ही खेदकी बात है कि जनता इन चिह्नोंकी पूजाको अत्यंत आवश्यक समझ लेती है और जिन भावों तथा सच्चाईयोंके वे चिह्न द्योतक हैं, उनको नहीं समझती। आज कल प्रायः हरएक धर्मके अनुयायियोंमें यही बात देखी जाती है। लोगोंको अब अपनी भूल समझनी चाहिए।

एक बात और भी है। इन चिह्नोंकी पूजा आदि और इन साधनोंका उपयोग तभी तक करना चाहिए, जब तक कि इनकी आवश्यकता है। जब आदमी उस अवस्थाको प्राप्त कर ले, जब कि आध्यात्मिक चिन्तनके लिए उसे किसी सहारेकी आवश्यकता नहीं है, तब वह इन चिह्नोंका उपयोग छोड़ सकता है। परन्तु यह खयाल रहे कि यह बात केवल बड़े बड़े महात्माओं और योगियोंके वास्ते ही है, जन-साधारणके वास्ते नहीं।

प्रश्न हो सकता है कि जो आदमी इन चिह्नों और पूजा-पाठ आदिकी तहमें काम करनेवाले भावों अथवा उनके गुप्त रहस्योंको नहीं समझा है, क्या उसे भी इनका उपयोग करना चाहिए? यह एक विवादग्रस्त विषय है और इसकी बहसमें पड़ना यहाँ ठीक नहीं है। किन्तु यह कहा जा सकता है कि ठीक यही है कि आदमी उस समय तक इन चिह्नोंका उपयोग करता रहे, जब तक वह

इतना सम्मुन्नत न हो जाय कि उन चिह्नोंके भावों और रहस्यों-को समझ सके। इमर्सनने आदमियोंको तीन भागोंमें बाँटा है। पहले वे आदमी हैं जो कि केवल इन चिह्नोंको देखते हैं और इनकी पूजा करते हैं, चिह्नके भावको नहीं समझते। दूसरे वे आदमी हैं, जो कि चिह्नोंको साधारण अथवा जड़ वस्तु किन्तु किसी सिद्धान्त अथवा भावके द्योतक समझकर उनकी पूजा करते हैं। और तीसरे वे आदमी हैं, जो सत्यको प्राप्त करके अपने लिए इन चिह्नोंकी भविष्यके वास्ते कोई आवश्यकता नहीं समझते, इन्हें छोड़ देते हैं।

ईश्वर-प्राप्तिका मार्ग न किसी धर्म विशेषमें परिमित है और न वह किसी क्रियाकाण्डमें मिलता है। यह तो मानवी आत्माकी उन गहराइयोंमें विद्यमान है जो कि सब धर्मों, पुरोहितों और क्रिया-काण्डोंसे मुक्त है।

जब आत्मा परमात्म-संयोगको अनुभव करता है, तब वह अपनी आन्तरिक शक्तियों और अपने वास्तविक स्वभावसे परिचित हो जाता है। भले ही यह बोध आरम्भमें धुँधला अथवा साधारण हो। सहज सहज यह प्रकाश उसकी आन्तरदृष्टिको बहुत साफ रूपसे दिखाई देने लगता है। फिर वह आदमी अपनी आत्मोन्नति तथा स्वहितके वास्ते अधिक श्रद्धाके साथ प्रयत्न करता है और परमात्म-संयोगके रहस्योंको जाननेकी इच्छा करता है। सहज सहज, अथवा कदम कदम चलकर वह आत्माके दूरवर्ती आदर्शोंकी स्वर्गीय चट्टानपर पहुँच जाता है। वह प्रत्येक कदम-पर महान् दृश्योंको देखता है और अपने आगे पड़ते हुए कदमोंके सामने उसे महान् तथा वैभवशाली उन्नतताके दर्शन होते हैं। जो प्रकाश कभी समुद्र अथवा भूमिपर नहीं पड़ा, वह उसके मार्गको देदीप्यमान करने लगता है। और ज्यों ज्यों वह आगे तथा ऊपर बढ़ता है, उसे यह बात मालूम होने लगती है कि न तो वह प्रकाश उसके मार्गसे कभी लुप्त होगा और न कभी आवश्य-

कताके समयमें उसका साथ छोड़ेगा। उसको इस बातका ज्ञान हो जाता है कि दुनियामें कोई महती शक्ति है और वह सदा रहेगी। वह समझने लगता है कि अनन्त उन्नतिका मार्ग उसके सामने खुला पड़ा है।

जो आत्मा अनन्त सुन्दर जीवनमें पदार्पण कर चुका है और आध्यात्मिक संस्कारके मार्गपर चलने लगा है, उसके लिए जो देदीप्यमान बातें सम्भव हैं उनका कोई अन्त नहीं है। उसके सामने आन्तरज्ञानका दरवाजा खुला हुआ है। शुद्ध हृदयवाले आदमी धन्य हैं, क्योंकि वे ही परमात्माके दर्शन करेंगे। उसी दरवाजेसे गुजर कर, जिसे कोई भी आदमी बन्द नहीं कर सकता, वह परमात्माके दर्शन करता है। इस दर्शनमें जो आनन्द है, उसे कौन वर्णन कर सकता है? कौन कह सकता है कि मैंने वहाँ यह देखा और मुझे यह आनन्द प्राप्त हुआ। यह तो एक-अवर्णनीय सुख है, जिसे शब्दोंद्वारा प्रकट नहीं किया जा सकता। यह तो एक रहस्य मात्र रहता है। यहाँपर तो 'गिरा अनयन, नयन बिनु बानी' वाली कहावत लागू होती है।

एक बार महात्मा ईसा मसीहसे एक बड़े आदमीने पूछा कि सत् क्या है? किन्तु मसीह चुप रहे, उन्होंने उस महान् रहस्यको प्रकट न किया। इस रहस्यको तो प्रश्नकर्त्ताकी आत्मा स्वयं अपने प्रयत्नसे जान सकती है। दूसरे आदमी उस आनन्दको न तो बता सकते हैं और न दिखा ही सकते हैं। उसको देखनेका तो मनुष्यको स्वयं प्रयत्न करना चाहिए। क्योंकि परमात्मा भी आत्माको कभी शब्दोंद्वारा उस रहस्यको नहीं बताता, वरन् उस कृपाके द्वारा प्रकट करता है जिसको प्राप्त करनेका वह आत्मा प्रयत्न कर रहा है। हमारे जिस भाईको परमात्म-दर्शन हो गये हैं, वह भी हमारी अज्ञात भावनाको अज्ञात रूपसे संतुष्ट कर देता है; परन्तु शब्दोंसे नहीं, वरन् अपनी उस कृपासे जो कि सूर्य्यके समान हमपर चमकती है और हमें सुख देती है। एक महात्माके आध्यात्मिक जीवनका प्रभाव दूसरे आदमियोंपर उन स्रोतोंसे पड़ता है

जिनसे कि वह महात्मा भी स्वयं अपरिचित है। उस महात्माको इस बातका ज्ञान हो सकता है, (सम्भव है, न भी हो) कि उसका प्रभाव अपना काम कर गया है। ऐसे महात्माके लिए चिह्न, नाम, सम्प्रदाय, दर्शन, प्रशंसा और निन्दा आदि कुछ अर्थ नहीं रखते। वह इन सबके झगड़ोंसे ऊपर है। अपने भीतर निवास करनेवाले महान् तत्त्वके सम्मिलनसे उसने अपने आपको पहिचान लिया है। अब उसका जीवन कोई भिन्न वस्तु नहीं है, वह अकेला नहीं है। वह सब आदमियोंसे प्रेम करता है, समस्त विश्वके जीवनमें अपने आपको लय हुआ समझता है। फिर वह कह सकता है कि परमात्मा और वह एक हो गये हैं और इस प्रकार वह अपने व्यक्तित्वके महलकी बड़ी भारी नींव रखता है।

द्वितीय खण्ड

विषय-प्रवेश

आगेके पाठ उन आदमियोंकी सहायताके लिए लिखे गये हैं, जो इस पुस्तकके प्रथम खण्डको पढ़कर सुसंस्कृत और शक्तिशाली जीवनको प्राप्त करनेका निश्चय कर चुके हैं। यदि इनको सावधानतासे पढ़ा जाय तथा दैनिक जीवनमें विश्वासपूर्वक व्यवहारमें लाया जाय, तो निश्चित फलोंको प्राप्त करनेमें असफलता नहीं हो सकती। लेखिकाने यह मार्ग स्वानुभवसे प्राप्त किया है और अब इस इच्छासे कि दूसरे आदमियोंको सहायता मिल जाय, उनका भी जीवन धन्य हो जाय, और वे भी इसको प्राप्त कर लें, इस अनुभवको उनके सामने रक्खा जा रहा है। यथासम्भव इन पाठोंको अत्यंत सरल भावमें लिखा है ताकि आत्म-संस्कृतिके विद्यालयका छोटेसे छोटा विद्यार्थी भी इनके अर्थको समझ जाय और इस मार्गपर चलनेमें कोई कठिनता अनुभव न करे। एक बात जिसकी पाठकको आवश्यकता है, वह है अपने उद्देश्यमें अटल विश्वास और उसमें सफलता प्राप्त करनेका दृढ संकल्प। कभी कभी किया जानेवाला प्रयत्न लाभदायक तो होगा, किन्तु उससे साधारण लाभ प्राप्त होगा। इसमें तो लगातार और अनथक भक्ति, महान् जोश और प्रति दिन अपने आदर्शकी ओर बढ़नेकी आवश्यकता है। प्रिय पाठको, विश्वास करो कि तुम उसके योग्य हो। यही जीवन है, और जीवन भी वह है जो कि अधिक महान् है।

—लिली एल० एलन।

व्यक्तित्व-प्राप्तिका मार्ग

१—आत्मानुवीक्षण

आध्यात्मिक शक्तिकी प्राप्तिके मार्गमें पहला स्थान आत्म-परीक्षाका है। यदि हम व्यक्तित्व-प्राप्तिके इच्छुक हैं, यदि हम अपने व्यक्तित्वको बनाना चाहते हैं, तो पहले हमें अपने आपको जानना चाहिए। किन्तु इस कामको हमें ऊपराऊपरी अथवा ढोंगपूर्वक या बनावटीरूपसे नहीं, वरन् सच्चे हृदयसे करना चाहिए। हमें अपने विचार और कार्यकी भूलोंकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, उन्हें नज़र अन्दाज़ न करना चाहिए। हमें अपनी विशेष त्रुटियोंको भी 'साधारण कमज़ोरी', 'अनियमितता' अथवा 'विशेष स्वभाव' का नाम न देना चाहिए। हमें या तो आत्म-परीक्षाके कामको सच्चाईके साथ बेधड़क होकर करना चाहिए, या इस कार्यको निरर्थक समझकर छोड़ देना चाहिए, कारण कि ऐसा करनेसे आत्म-परीक्षाका उद्देश सिद्ध नहीं होता और इससे कोई वास्तविक तथा स्थायी लाभ नहीं होता।

क्या हम एक वस्तुको उसके असली नामसे पुकारनेको तय्यार हैं? क्या हम अपनी त्रुटियोंको त्रुटियाँ माननेके लिए तय्यार हैं? क्या हम इस बातको स्वीकार करते हैं कि जब हमने दूसरे आदमियोंके सुखका ध्यान न रखकर लाभका खयाल सामने रक्खा है, तब हमने स्वार्थसे काम लिया है? क्या हम अपनी त्रुटियोंको, चाहे वे किसी भी प्रकारकी क्यों न हों, उनके असली नामसे पुकारनेके लिए तय्यार हैं? और क्या हम

उनको अभिमानसे अथवा अपनी मानपूर्तिके लिए कोई दूसरा लुभावना और चमकदार नाम तो नहीं देते हैं ?

निस्सन्देह जो काम हमें सर्व प्रथम करना है वह है अपने मनकी उन सब बातोंको मालूम करना जो सत्यके विरुद्ध हैं। मनको सबसे पहले इसी कारण लिया गया है कि हमारे समस्त जीवन और सब व्यवहारोंका निकास मनसे ही होता है। आदमी विचारता है, इसी लिए उसका अस्तित्व है।

जिस प्रकार झाड़ियोंपर अञ्जीर तथा बबूलोंपर आम नहीं लग सकते, ठीक उसी प्रकार दुर्बल मनसे दृढ चरित्र पैदा नहीं हो सकता। डावाँडोल मनका फल सच्चरित्र नहीं हो सकता और अपवित्र, छलपूर्ण तथा अनिश्चित विचार-धारासे सुन्दर तथा प्रभावशाली चरित्र उत्पन्न नहीं हो सकता। दृढ, सुन्दर और प्रभावशाली सच्चरित्रकी उत्पत्तिके वास्ते पवित्र मनका होना अत्यंत आवश्यक है, अनिवार्य है।

कुछ समयके लिए यह सम्भव हो सकता है कि हम उन आदमियोंकी आँखोंमें धूल डाल सकें, उन्हें धोका दे सकें, जो हमें सज्जन और योग्य समझते हैं, किन्तु इस प्रकारकी विजय अल्पकालिक ही होती है। हम दुनियाको अधिक समय धोखा देनेमें सफल नहीं हो सकते, हमारी वास्तविकता सबपर शीघ्र ही प्रकट हो जायगी, कारण कि सच्चाई छुप नहीं सकती। और तो क्या, यदि कोई बात सात कोठोंके भीतर छुपकर सहजसे भी कानमें कही जाय, संसारके नियम उसको भी डंकेकी चोट प्रकट कर देते हैं। याद रक्खो, ऐसी कोई भी छुपी बात नहीं है जो प्रकट न होगी।

झूठा आदमी अन्तमें सिवाय अपने और किसीको धोखा नहीं देता।

इसलिए हमें अपने स्वाभाविक विचारोंकी ही पड़तालसे काम आरम्भ करना चाहिए। हमें केवल अपने बड़े बड़े विचारोंकी ही

जाँच न करनी चाहिए, छोटे छोटे उड़ते हुए विचारोंका भी पूरा ध्यान रखना चाहिए; क्यों कि ये भी हमारी जड़ोंको काट सकते हैं, हमें हानि पहुँचा सकते हैं। तुच्छ विचार जीवनको पतित कर देते हैं। मूर्खतापूर्ण व्यवहारकी जड़ें सदा मूर्खतापूर्ण विचारमें होती हैं। किसी आदमीके विचार जाननेके वास्ते उसको कुछ पैसे देनेकी जरूरत नहीं है। यदि हम किसी विचारशील आदमीके मुख तथा उसके व्यवहारको किसी भी परिस्थितिमें कुछ समय देखें, तो हम उस आदमीके विचार मालूम कर सकते हैं और अपने पैसोंको बचा सकते हैं।

जब महात्मा ईसाने नामन नामके किसी कोढ़ीसे उसको आराम करनेके वास्ते जौर्डन नामक तालाबमें सात बार स्नान करनेको कहा, तब नामनने क्रोधसे मुख फेर लिया। परन्तु उसके दासोंने आकर कहा, "नाथ, यदि प्रभु ईसामसीह किसी बड़े कामको करनेके लिए कहते, तो क्या आप न करते? फिर क्यों नहीं आप स्नान करते और अच्छे हो जाते?"

आज संसारमें बहुतसे आदमी नामनके समान हैं। वे भी नामनकी तरह बड़े बड़े काम, बड़े बड़े दान और व्रत आदि करनेके लिए तो सदा तय्यार हैं, किन्तु साधारण काम उनसे नहीं हो सकता। वे बड़े काम तो कर सकते हैं; परन्तु अपने मनोंको शुद्ध करनेका साधारण काम नहीं कर सकते।

हमें यह बात खूब अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि आदमीके विचारोंको कोई भी बाह्य साधन पवित्र नहीं बना सकता अथवा असद्विचारोंसे सद्विचारोंके फल उत्पन्न नहीं कर सकता। यदि किसी सरोवरके स्रोत ही विषैले हों, तो उनसे प्रवाहित होनेवाला जल विषैला ही होगा, मीठा नहीं हो सकता। यदि हम सरोवरके जलको मीठा बनाना चाहते हैं, तो हमें सरोवरको साफ करके उसके स्रोतोंको उचित रूपसे पलटना होगा। ठीक इसी प्रकार जिन आदमियोंके जीवन-स्रोत, मन, ही गंदे विचारोंसे भरे हुए हैं, उनके काम भी किसी प्रकार अच्छे नहीं हो सकते।

अपने कामोंको अच्छा बनानेके वास्ते हमें अपने हृदयोंको शुद्ध करना होगा और उनमें उठनेवाले विचारोंको ग्राह्य और सत्य बनाना होगा, ताकि हमारे काम भी सुन्दर और अच्छे हों। सचमुच जीवन-सुधारका यही एक मार्ग है, दूसरा नहीं।

निस्सन्देह आदमीका अस्तित्व, उसके कामोंसे अथवा उसकी सफलताएँ उसके विचारोंसे जुदा नहीं हैं। ये सब उसके विचारोंके अनुकूल ही हैं। आत्म-ज्ञानके विना आदमी वृद्धि अथवा प्रगति नहीं कर सकता।

आत्म-परीक्षा अथवा अपनी आन्तरिक जाँच-पड़तालसे ही आत्म-ज्ञान प्राप्त होता है। इसके साथ आदमी यह दृढ संकल्प भी कर ले कि आत्मानुवीक्षण करते समय वह पूरी ईमानदारीसे काम लेगा तथा आत्मालोचन और आत्म-पृथक्करणमें अथक रूपसे काम करेगा।

इस लिए अपने आपको समझो तथा अपना ज्ञान प्राप्त करो।

आत्मानुवीक्षणसे ही आत्म-ज्ञान प्राप्त होता है। इस लिए अपने हृदयोंकी पूर्ण तथा कड़ी परीक्षासे ही हमें अपने कामको आरम्भ करना चाहिए और जहाँ कहीं भी हम अपने हृदयोंमें कोई बुरा विचार अथवा मिथ्या विचार पाएँ, उसकी पूर्ण रूपसे निर्दयतापूर्वक निन्दा करें और उसे अपने हृदयमें स्थान न दें, बाहर निकाल फेंकें।

प्रश्न हो सकता है कि यह कैसे मालूम किया जाय कि अमुक विचार मिथ्या है, ठीक नहीं है। यद्यपि इस प्रकारकी नियत कसौटी आपको कोई नहीं बताई जासकती, जिससे आप सहसा यह मालूम कर लें कि अमुक विचार ठीक है या नहीं। फिर भी यह कहा जा सकता है कि बुरे विचारको मनुष्यका अन्तःकरण उसी समय बता देता है। क्या आपने कभी यह अनुभव नहीं किया कि जब कभी आपके मनमें कोई बुरा विचार उठता है अथवा आप किसी बुरे कामको करनेको तत्पर होते हैं, उस समय आपके मनमें कुछ धक्कासा लगता है, भीतरसे कुछ चेतावनीसी मिलती

६

है कि यह विचार अपने हृदयमें मत लाओ, यह ठीक नहीं है और इस कामको मत करो ? जो आदमी अपने अन्तःकरणके संकेतोंसे काम लेते रहते हैं, उनकी विवेक-शक्ति अथवा भले-बुरेको पहिचाननेकी शक्ति बढ़ती रहती है। विपरीत इसके, जो आदमी अपने अन्तःकरणकी चेतावनियोंपर ध्यान नहीं देते, उनकी उपेक्षा करते हैं, उनकी यह विवेक-शक्ति दिन प्रति दिन कम होने लगती है और अन्तमें उनके अन्तःकरण मृतवत् हो जाते हैं। फिर वे आदमी किसी भी बुरेसे बुरे कामको करते समय न रुकेंगे। बड़े बड़े पापी महान्से महान् अत्याचार करते हुए भी नहीं काँपते, इसका कारण यही है कि उनके अन्तःकरण मर जाते हैं। अतः यदि आप चाहते हैं कि आपको अच्छे बुरे विचारोंको पहिचानना आ जाय, तो आपको अपने अन्तःकरणकी विवेक-शक्तिको दिन प्रतिदिन विकसित करना चाहिए।

उपर्युक्त नियमको बता देनेके पश्चात् उदाहरणके तौरसे कुछ असद्विचारोंको बता देना भी आवश्यक मालूम होता है, ताकि उनके समान दूसरे बुरे विचारोंको भी आसानीसे पहिचाना जा सके। यह तो एक अत्यंत ही संक्षिप्त सूची है। यहाँ विस्तृत सूची देना कठिन है, उसे तो विचारशील पाठक स्वयं ही तय्यार करें।

दूसरे आदमियोंके सम्बन्धमें सोचे हुए अहितकर विचार सब बुरे होते हैं, अपवित्र विचार तो बुरे हैं ही। झूठ, चोरी, हिंसा और कुशीलसे सम्बन्ध रखनेवाले विचार अत्यंत बुरे हैं। कृतघ्नता, देशद्रोह, विश्वासघात आदिके विचार भी निन्दनीय हैं। स्वार्थपूर्ण विचार पतित होते हैं। इस प्रकारके विचारोंकी जाँच करनेमें अधिक सावधानतासे काम लेना चाहिए, क्योंकि इनकी पड़तालमें बहुधा धोखा हो जाता है। हम एक असद्विचार तथा अपवित्र विचारको समझनेमें कम गलती करते हैं, क्यों कि वे दूरसे ही बुरे मालूम होते हैं, परन्तु एक स्वार्थपूर्ण विचार बड़ा ही धोखा देनेवाला, लुभावना और चमकदार होता है और अच्छे अच्छे आदमियोंकी आँखें उससे चौंधया जाती हैं और वे ढोंगी बन जाते हैं। दूसरे

आदमियोंके प्रति संकीर्णतापूर्ण विचारोंको भी समझना कुछ कठिन होता है, क्योंकि बहुधा आदमी ऐसे विचारोंको 'खरी बात', 'सच्ची समालोचना' और लोकहितके नामसे कुछ सुहावने तथा मोहक बना देते हैं।

एक आदमीके वास्ते, अपने किसी स्वार्थ-साधनके लिए कठिनसे कठिन धार्मिक तप करना और फिर दिलमें यह सोचना कि वह परमात्मा और मानव-समाजकी सेवा कर रहा है, सम्भव है। धार्मिक स्वार्थसे प्रेरित होकर किये हुए कामोंके उदाहरण देना कठिन नहीं है। परमतावलम्बियोंपर कर लगाना, उनका वध करना, उनके नेताओंको मारना, उनके कामोंमें रुकावट डालना अथवा धोखे या चालसे परमतावलम्बियोंको स्वमतकी दीक्षा देना—ये सब ऐसे काम हैं जिन्हें कट्टर धर्मांध जनता धर्म तथा परमात्माके नामपर करते हुए झिझकती ही नहीं, वरन् इनके करनेके पश्चात् अपने आपको धर्मकी सेवक, धर्मपर मर मिटनेवाली, परमात्माकी सच्ची भक्त, शहीद तथा स्वर्गका हकदार समझती है। याद रक्खो, ये सब काम धार्मिक स्वार्थसे अन्धे होकर ही किये जाते हैं और इस लिए बुरे हैं। परन्तु कितने आदमी ऐसे हैं जो इनको बुरा समझते हैं? कतिपय धर्मांध आदमी तो ऐसे काम करनेवालोंकी पूजा तक करते हैं! निस्सन्देह ऐसे कामोंकी जितनी निन्दा की जाय, कम है। यह कहा जा सकता है कि धार्मिक स्वार्थ सब पापोंसे तीक्ष्ण है और उनको पहिचानना अत्यंत कठिन है।

हमें अपने प्रत्येक उद्देश्यकी खूब छान-बीन करनी चाहिए और इस काममें हमें तब तक लगे रहना चाहिए जब तक कि हमें अपने उद्देश्यके बारेमें यह विश्वास न हो जाय कि इसका भाव ठीक है।

जिन विचारोंका कोई उद्देश्य ही नहीं है, उन सबको भी त्याग देना चाहिए।

वह गृहस्थ कितना मूर्ख है, जो अपने अन्नको हवामें उड़ा देता है

और अपने कोठेको भूसेसे भर लेता है ! क्या कभी कभी आदमी बादामको फोड़कर उसकी गिरीको फेंक नहीं देते तथा छिलकेको हाथमें नहीं रख लेते ? इसी प्रकारकी मूर्खताएँ और भूलें आदमी प्रति दिन हृदयके सम्बन्धमें भी करता रहता है । जिस हृदयको हमें सद्विचाररूपी जवाहरातसे भरना चाहिए, जिससे हमें अकथनीय मानसिक, आध्यात्मिक, शारीरिक तथा संसारिक उन्नति प्राप्त हो, क्या हम उसी हृदयको मूर्खतापूर्ण, लक्ष्यहीन, खाली और व्यर्थके विचारोंसे नहीं भरते ?

तुम्हारे जीवनके जो क्षण व्यतीत हो रहे हैं, उनको साद और मीठे, पवित्र और सुन्दर, श्रेष्ठ और आशापूर्ण, उच्च और दृढ, उत्तेजक और महत्त्वाकांक्षापूर्ण तथा नम्र और प्रेममय विचारोंसे भरो । फिर वे विचार तुम्हारे जीवनमें स्वानुरूप ही फल पैदा करेंगे और अन्तमें तुम्हारा दैनिक जीवन तुम्हारे आन्तरिक शुभ विचारोंका जीता-जागता स्वरूप बन जायगा ।

महात्मा जेम्स एलनने कहा है, " विचारोंसे ही हम उठते हैं और विचारोंसे ही गिरते हैं । उनसे ही हम खड़े होते हैं और उनसे ही चलते हैं । उनकी जबरदस्त शक्तिसे सबका भाग्य बनता है । जो आदमी अपने विचारका स्वामी बनकर रहता है, जो आदमी अपनी इच्छाओंको अपने वशमें रखता है और जो आदमी प्रेमपूर्ण तथा शक्तिदायक विचारोंकी आकांक्षा करता तथा उन्हें मिलाये रखता है, वह आदमी अपने महान् आदर्शको सत्यके तीक्ष्ण तथा अचूक प्रकाशमें निर्माण करता है । "

२—मुक्ति

" एक आदमीका जीवन पूर्ण रूपसे उसके मनसे ही पैदा होता है । "

—जेम्स एलन

यदि हम उपर्युक्त अवतरणकी सच्चाईको एक बार भी स्वीकार कर लें, तो हम यह बात भली प्रकार समझ जायँगे कि यह क्यों आवश्यक है कि हमारा अपनी विचार-शक्तिपर पूरा अधिकार हो और क्यों हम पूर्ण रूपसे अपने मन, उसकी दुर्बलताओं तथा उसकी शक्तिसे परिचित हों ।

तुम्हारे जीवनकी हरएक बातका, निकास-स्थान तुम्हारा मन ही है, चाहे वह सफलता हो या असफलता, आनन्द हो या क्लेश, सुख हो या दुख । विचारमें उत्पादक अथवा रचनात्मक शक्ति होती है । चाहे कोई विचार किसी भी प्रकारका क्यों न हो, उसमें एक शक्ति होती है, जो कि विचारककी तरफ उसके विचारके अनुरूप ही जीवनके अनुभव खींचती है । भाव यह है कि आदमीके विचार उसकी तरफ कुछ ऐसे परमाणुओंको खींचते हैं जो कि आदमीको वैसी ही बातें अनुभव करा देते हैं जैसे कि उसके विचार होते हैं । इसलिए आदमीका मन उसके भाग्यका बड़ा शक्तिशाली विधाता है और वह उसके जीवनरूपी महलमें हर समय इस प्रकारका मसाला लगाता रहता है जिससे आदमी अपने विचारोंके अनुकूल बातें अनुभव करता है ।

एक बार एक बूढ़े आदमीने कहा कि जिस बातका मुझे भय था, वही हो गई । उसके इस वाक्यमें वही बात छुपी हुई है, जिसको स्पष्ट करनेका प्रयत्न हम कर रहे हैं कि मनुष्य अपने विचारोंके अनुरूप घटनाएँ रचता रहता है । भय एक भयंकर वस्तु है और उसमें एक विचित्र कर्तव्य-शक्ति है । जिस बातसे हम भय खाते हैं, प्रायः शीघ्र या देरमें वही बात हमारे सामने जरूर आ जाती है । किसी भी अवस्था अथवा घटनाका भय मनमें अधिक देर तक

करते रहनेसे अन्तमें वही परिस्थिति अथवा घटना हमारे सामने पैदा हो जाती है, जिसके होनेसे हम डरते थे। विचार एक केन्द्रीय शक्ति है। वह एक ऐसी आकर्षक-शक्तिको पैदा करता है, जो कि उसी बातको हमारी तरफ़ खींचता है, जिसका हम विचार करते हैं।

एक स्त्रीकी माँ एक रोग-विशेषमें मर गई थी। उस स्त्रीको सदा अपनी माँ-वाली बीमारीका भय रहा करता था। उसको यह बात समझानेका प्रयत्न किया गया कि उसके लिए उस बीमारीसे भय खानेका कोई कारण नहीं है। उसे यह भी बताया गया कि जिन कारणोंसे वह बीमारी उसकी माँको हो गई थी, वे कारण उसमें मौजूद नहीं हैं। उसे आदमियोंके उस अधिकारका भी ज्ञान कराया गया जिससे आदमियोंको अपने पूर्वजोंके रोगोंसे रहित शरीर मिलता है,* किन्तु यह सब व्यर्थ हुआ। इन बातोंका उस स्त्रीपर कोई प्रभाव न हुआ। उस बीमारीके ख्यालका भूत उस स्त्रीके सरपर हर समय सवार रहने लगा। वह हर समय भयभीत रहती थी और अपने बचावका निरंतर प्रयत्न करती रहती थी। अन्तमें उस स्त्रीको वही रोग हो गया, जिससे वह इतना डरती थी। क्या यह आवश्यक था कि उस स्त्रीको वह रोग होना ही चाहिए, क्योंकि उसकी माँ उस रोगसे मरी थी? नहीं, यह रोग उसने अपने विचारोंसे ही पैदा कर लिया था।

बहुतसे पाठकोंने एक अध्यापक और उसके विद्यार्थियोंकी वह कथा सुनी होगी, जिसमें कि एक क्रूर अध्यापकसे बचनेके वास्ते लड़कोंने उसके विचारोंपर प्रभाव डालकर उसको बीमार कर देनेका षड्यंत्र रचा था। वह कहानी संक्षेपमें इस प्रकार कही जाती है—एक अध्यापक था। वह अपने विद्यार्थियोंको कुछ अधिक पीटा करता था। विद्यार्थी उससे तंग थे। एक दिन उन्होंने उससे छुटकारा

* 'अभिजनन-शास्त्र' (Eugenics) के विद्वानोंका मत है कि कुछ रोग ऐसे भी हैं, जो पीढ़ी दर पीढ़ी वंशमें चलते रहते हैं। —अनुवादक

पानेकी तरकीब सोची। सबने आपसमें सलाह की कि अबकी बार जब वह अध्यापक कक्षामें आए, तब उसे कहा जाय कि गुरुजी, आपके चहरेसे तो ऐसा मालूम होता है कि आपको कोई बड़ी बीमारी हो गई है। अगले दिन अध्यापक महोदयके कमरेमें प्रवेश करते ही कुछ लड़कोंने इसी बातको कहा और कुछने अनुमोदन किया। अध्यापकने कहा कि मुझे कोई रोग नहीं है। परन्तु लड़कोंने फिर एक स्वरसे पहली बातको दुहराया। अध्यापकको लड़कोंकी बातका कुछ ख्याल हो गया और घर जाकर उसने शीशेमें मुख देखा। कोई खास बात मालूम नहीं हुई। अगले दिन फिर लड़कोंने वैसे ही कहा और शीघ्र ही कुछ इलाज करानेपर जोर दिया। अब तो अध्यापक महोदयको लड़कोंकी बातपर विश्वास हो गया और दिलमें विचार करने लगा कि अवश्य मैं किसी गुप्त रोगसे ग्रसित हूँ। यों सहज ही वे बीमार हो गये। जब वे अधिक बीमार हो गये, तब लड़कोंने उनसे विद्यार्थियोंको कम पीटनेकी प्रतिज्ञा कराकर सारा भेद खोल दिया। समस्त घटनासे परिचित होते ही, अध्यापक महाशयको आराम हो गया। यह कथा सच हो या कल्पित हो, परन्तु विचार-शक्तिके प्रभावको अच्छी तरह प्रकट करती है।

ऊपरकी इन दोनों घटनाओंसे, तथा ऐसी अन्य घटनाओंसे, यह बात भली प्रकार प्रकट होती है कि यदि किसी बातसे तुम काफी समयतक और खूब भय खाते रहो, तो वह भय वास्तविक रूप धारण करके तुम्हारे सामने आ जायगा, यह भय चाहे किसी रोगका हो या घटनाका, परिस्थितिका हो या किसी हालत विशेषका। यही बात सब प्रकारके विचारोंकी है। प्रत्येक विचार अपने अनुरूप ही परमाणु आदमीकी तरफ खींचता है। अच्छे विचारोंसे अच्छे परमाणु तुम्हारी तरफ आयँगे और वे वैसी ही अच्छी बातें तुम्हारे लिए पैदा कर देंगे। अब आप समझ सकते हैं कि आत्म-ज्ञान प्राप्त करना कितना आवश्यक है।

बस, यहींसे मुक्तिका कार्य आरम्भ होता है। आपको भ्रमपूर्ण—

गलत—विचारोंके अत्याचारसे अपने आपको मुक्त करना चाहिए, उनसे स्वतंत्रता प्राप्त करनी चाहिए। यदि आप चाहते हैं, तो उनका अलग अलग विभाजन करो। उन सबकी एक सूची बना लो और उनको अलग अलग स्तम्भों (कालमों—खानों) में रक्खो। यथा—भयजनक विचारोंको एक स्तम्भमें, आलस्यपूर्ण विचारोंको दूसरे स्तम्भमें, मूर्खतापूर्ण विचारोंको तीसरे स्तम्भमें और स्वार्थपूर्ण विचारोंको चौथे स्तम्भमें रक्खो। इसी प्रकार सद्विचारोंको भी अलग छाँटकर स्तम्भवार लिखा जा सकता है। यथा—उत्साहवर्धक विचार, शक्तिदायक विचार, दयापूर्ण विचार, देश भक्तिके विचार, विश्वप्रेम तथा विश्वसेवाके विचार आदि। यहाँ कुछ ही प्रकारके विचार बताये गये हैं, पाठक अन्य विचारोंकी भी सूची बना सकते हैं। इतना करनेके पश्चात् आपको जो काम करना है, वह यह है कि अपनी विचार-धाराको इस प्रकार प्रवाहित करो कि बुरे विचारोंकी संख्या कम होने लगे और उनका स्थान सद्विचार लेने लगें। निरन्तर प्रयत्न करते रहनेसे तुम देखोगे कि एक दिन तुम्हारी दुर्विचारवाली सूचीपर एक भी बुरा विचार न रहेगा और सद्विचारवाली सूची बड़ी बन जायगी।

जब आपको कोई मकान बनवाना होता है, तो अपने भावी मकानका नकशा (Plan) तय्यार करके मकान बनानेवाले राज या इञ्जीनियरको देते हैं। वे उस नकशेको अपने सामने रखकर काम शुरू करते हैं और काम करते रहते हैं। प्रतिदिन आप अपने मकानको अपने नकशेके अनुसार बनता हुआ देखते हैं और कुछ दिन या महीनोंमें मकान आपके नकशेके अनुसार तथा आपकी इच्छाके अनुसार बन जाता है। ठीक यही हाल आदमी और उसके मनका है। आदमीका मन भी एक बड़ा चतुर निर्माता है। जैसा तुम बनना चाहते हो, वैसा नकशा अपने मनको दे दो या वैसे आदर्शकी उपासना करो और बड़ी मुस्तैदीसे उसके अनुसार सोचते रहो, तो फिर कोई भी वस्तु आपके जीवनको

आपकी स्कीमके अनुसार बननेसे न रोक सकेगी, आपका जीवन आपकी इच्छानुसार ढल जायगा। इस लिए आपको शीघ्र ही उन विचारोंसे अपने आपको मुक्त करना चाहिए, जिन्होंने भूत-कालमें तुम्हारी प्रगतिको रोक रक्खा है, जिन्होंने तुम्हारे रास्तेमें रुकावट डाली है और तुम्हें निर्बल बना दिया है। शीघ्र ही सदाके लिए अपने मनसे भय, सन्देह, निराशा, असंतोष, और अपने महान् हितमें अविश्वासके विचारोंको निकाल दो। इस कामको करते समय तुम्हारा हृदय सफलताके उच्च भावोंसे भरा होना चाहिए। फिर तुम अपने आपको प्रतिदिन उस मार्गपर आगे बढ़ता हुआ देखोगे, जिसपर चलनेके लिए तुम्हारा हृदय फड़क रहा है, लालायित है। अपने आदर्शरूपी महलको सत्-प्रयत्न और प्रसन्नतापूर्ण आशामय विश्वासकी ठोस तथा दृढ नींवपर खड़ा करो। फिर तुम्हें कोई भी वस्तु नहीं रोक सकती और न कोई वस्तु तुम्हारे जीवनको उस आनन्द और सुखसे वञ्चित कर सकती है जिसकी तुम अभिलाषा करते हो। अतः अपने आपको दुर्विचारोंसे मुक्त करो।

३—आत्म-विकाश

" ऐ मेरे आत्मा, ज्यों ज्यों शीघ्रतासे व्यतीत होनेवाली ऋतुएँ गुजरती हैं, त्यों त्यों तू अपने लिए दृढ भवन निर्माण कर । तू अपने पहले संकुचित निवास-स्थानको त्याग दे और अपने लिए पहलेसे अच्छा नवीन मन्दिर बना । उस मन्दिरमें तू उस समय तक निवास कर जब तक कि तू अन्तमें पूर्ण स्वतंत्र न हो जाय, मुक्त न हो जाय । "

—औलिवर डब्ल्यू होम्स ।

जिस प्रकार आत्म-ज्ञान हमारे अपने विचारोंकी सच्ची परीक्षाका फल है और जिस तरह आत्म-मुक्ति भीतरसे होती है, उसी प्रकार वास्तविक तथा सच्चा आत्म-विकाश भी आदमीके भीतरसे ही आरम्भ होना चाहिए और फिर वह आत्म-विकाश दैनिक जीवन तथा चरित्रमें बाहर प्रकट होना चाहिए ।

आदमीका जैसा मन होता है, वैसा ही उसका बाह्य रूप होता है । वास्तवमें मन ही आदमीको बनाता है ।

यदि आपने द्वितीय खण्डके पहले दोनों परिच्छेदोंको पूर्ण रूपसे समझ लिया है तथा उनपर अमल कर लिया है, तो यह कहना चाहिए कि आपका विकाश होना आरम्भ हो गया है और जिस हद तक आपने विश्वास तथा संलग्नताके साथ पहले दोनों पाठोंमें बताये हुए ढँगोंको अमली रूपमें परिणत किया है, उसी सीमा तक आप मानसिक, आध्यात्मिक तथा शारीरिक रूपसे विकसित हुए हैं ।

जब जब हम एक सद्विचारका मनन करते हैं, तब तब हम वास्तविक हितकी रचना करते हैं और हरएक वास्तविक हित जब हमारे जीवनमें प्रवेश करता है, तब निश्चित रूपसे हमारा उतना ही विकाश होता है ।

ऐसा मालूम होता है कि जनताकी अधिक संख्या अपने जीवनके बहु भागको आजीविका-प्राप्तिमें लगा देती है। आजीविका-साधनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती; किन्तु उसके पीछे लोग जब समस्त दूसरे कामोंको भूल जाते हैं अथवा उसे मुख्य स्थान देकर दूसरे अति आवश्यक कामोंको गौण स्थान देते हैं, तब यही कहना पड़ता है कि उन्होंने अपने इस ढँगसे पहले कामोंको पीछे डाल दिया है और पिछले कामोंको आगे कर लिया है; अथवा यों कहो कि उन्होंने अति आवश्यक कामोंको आवश्यक और आवश्यक कामोंको अति आवश्यक बना दिया है। यदि वे अपने विचारों, समय और अपनी मानसिक शक्तियोंको अधिकतया अपना जीवन बनानेमें लगाते, तो उनको आजीविका-प्राप्तिके साथ साथ सुन्दर तथा समृद्धिशाली जीवन भी प्राप्त हो जाता।

मानसिक तथा आध्यात्मिक रूपसे विकसित होनेसे आदमी वह वस्तु प्राप्त कर लेता है, जिसमें समस्त छोटी छोटी वस्तुएँ भी सम्मलित हैं। एक स्थानपर कहा गया है कि "ए आदमी, तू सर्व प्रथम राम-राज्य परमात्मीय सत्यको तलाश कर, फिर दूसरी वस्तुएँ तुझे स्वयमेव प्राप्त हो जायँगी।" यही एक परमात्मीय नियम है और सदा स्थिर रहनेवाला कार्य है। परन्तु लोग इसपर विश्वास नहीं करते। वे कहते हैं कि आदमीके जीवनका आधार तो केवल रोटियाँ ही है, न कि परमात्माका दिया हुआ उपदेश। इसीलिए आदमी अपनी समस्त शक्ति और सारा ध्यान सांसारिक, नाशमान् और बाह्य वस्तुओंकी प्राप्तिमें लगा देता है। ये वस्तुएँ शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं और वे आदमी संसारमें खाली हाथ रह जाते हैं। इन नाशमान् वस्तुओंको प्राप्त करते समय आदमी उन आन्तरिक तथा अमर वस्तुओंको सर्वथा भूल जाते हैं, जो कभी नष्ट नहीं होतीं।

एक भी दिन अपनी ज्ञानराशिमें कुछ न कुछ वृद्धि किये बिना और यह अनुभव किये बिना मत व्यतीत होने दो कि तुमने अपनी मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियोंमें कुछ उन्नति की है।

किसी भी दिनको इन दोनों वस्तुओंको किसी भी अंशमें प्राप्त किये बिना व्यतीत कर देना अपने जीवनके एक बहुमूल्य दिनको व्यर्थ खो देना है, अपने आपको टोटेमें रखना है। किन्तु यदि आप प्रत्येक दिन कुछ न कुछ ज्ञान जरूर प्राप्त करते हैं और अपने आपको मानसिक तथा आध्यात्मिक रूपसे किसी हद तक समुन्नत करते हैं, तो कहना चाहिए कि आपने अपने उस दिनका सदुपयोग किया है और अपनी उन्नतिके मार्गमें आगे कदम बढ़ाया है।

तुम्हें यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि मन ही आदमी है और तुम अपने मनको इस ढँगसे पुष्ट तथा संयत कर सकते हो और उपयोगमें ला सकते हो कि अपने आन्तरिक धनके भाण्डारसे विचारोंके खजाने, ज्ञान-राशि और प्रकाशको प्रति दिन बाहर लाओ। इन तीनों बातोंसे तुम अपनी बुद्धि और शक्तिमें इतनी उन्नति तथा विकाश प्राप्त कर लोगे कि तुम स्वयं एक महती शक्तिका रूप धारण कर लोगे। इस शक्तिसे तुम अपने जीवन और परिस्थितियोंको अपने उस आदर्शके अनुकूल बना सकोगे, जिसकी तुम आकांक्षा करते हो।

बहुत आदमी जो गलती, या भूल करते हैं, वह यह है कि वे इस बातपर विश्वास नहीं करते कि उनके भीतर वह वस्तु मौजूद है जो कि उनके आदर्शोंको प्राप्त करनेके लिए आवश्यक है। वे इस बातपर भी विश्वास नहीं करते कि आदमीका मन एक विशाल कोष है। जबतक वे इस मिथ्या विश्वासपर डटे रहेंगे, तबतक वह शक्ति-कोष उनके लिए बन्द ही रहेगा। ऐसी हालतमें उनको यही अनुभव होगा जैसे कि उनके पास वह शक्ति-कोष है ही नहीं। यह महान् कोष कैसे खोला जाय? इसको खोलनेका साधन विचार ही है। यदि इसमें आपको कुछ सन्देह है, तो इसकी अभी परीक्षा आरम्भ कर देनी चाहिए। अपने लिए प्रति दिन एक विचार-पाठ (Thought Exercise) नियत कर लो। यदि तुम एक विचार-पाठ सारे दिन मनन करना कठिन समझते हो, अथवा

यह समझते हो कि एक पाठपर बार बार विचार करनेसे तुम थक आओगे या तुम्हें उचाट पैदा हो जायगी, तो तुम प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकालके लिए अलग अलग विचार-पाठ नियत कर सकते हो। बहुतसे धर्मोंमें भिन्न भिन्न समयोंके वास्ते भिन्न भिन्न पाठ नियत होनेका यही कारण प्रतीत होता है। प्रातःकालका समय पुण्य, सौन्दर्य अथवा सिद्धान्तसम्बन्धी विचारोंके मननमें लगाया जा सकता है। यह समय हृदय शुद्ध होनेसे सद्भावना-पाठ तथा सिद्धान्त-चिन्तनमें व्यतीत किया जासकता है। दोपहरका समय अपनी मानसिक और शारीरिक उन्नतिसम्बन्धी किसी विचारके मननमें लगाना चाहिए। सायंकाल अपने इष्ट भविष्यकी कल्पनाओंके विचारोंमें मस्त रहकर व्यतीत करना चाहिए। उस समय अपने आपको उसी हालतमें खयाल करो कि जिसकी तुम्हारा हृदय उत्कट इच्छा करता है। उस समय, अपनी बाह्यावस्था तथा परिस्थितिको अपनी उच्च कल्पनाओंके सुन्दर रंगमें रँग डालो। उस वक्त अपनी कल्पनामें ही यह समझो कि तुम उस स्थितिमें पहुँच गये हो, जिससे तुम्हें अपने लिए अनन्त सुख प्राप्तिकी सम्भावना है, जो तुम्हारी शक्तियोंको प्रकट होनेके वास्ते विशाल क्षेत्र देगी और जो तुम्हें जनताके वास्ते अत्यंत उपयोगी बना देगी। शायद आप कहें कि इस प्रकार हवाई किले बनाने अथवा मन-मोदक खानेसे क्या लाभ हो सकता है, तो इसका उत्तर यही है कि आदमी जो कुछ बनना चाहता है, उसे उसके अनुरूप पहले अपने मनमें अवश्य सोचना पड़ता है और आदमी वही बन जाता है जो कुछ कि वह बनना चाहता है।

उपर्युक्त कार्य करनेके वास्ते, विचाराभ्यास करनेके वास्ते, अपने काम-काजको छोड़कर एक तरफ बैठने अथवा घर-बारका त्याग करके बाहर जंगलमें जानेकी आवश्यकता नहीं है। इसके लिए अपने वर्तमान कामों तथा कर्तव्योंको छोड़नेकी जरूरत नहीं है, वरन् यह काम आप अपने दूसरे काम करते समय भी कर

सकते हैं। आदमी प्रतिदिन अपने उस अमूल्य समयको गप्पों, लक्ष्यहीन विचारों तथा परनिन्दामें व्यय कर देते हैं, जिसे यदि हमारे लिखे अनुसार व्यय किया जाता, तो उन सहस्रों आदमियोंके जीवनों और हालतोंमें बड़ा भारी परिवर्तन हो जाता, जो कि आजकल असंतुष्ट, निराश और थके हुए अर्थात् हिम्मत हारे हुए हैं। थोड़ी देरके वास्ते उसी समयका विचार करो, जिसको आदमी अपने कामपर जाने तथा वहाँसे लौटते समय गलियों, सड़कों और मोटर आदिमें व्यतीत करते हैं। यदि उस ही समयको आदमी इस पाठमें बताई हुई बातोंके अनुसार समुचित रूपसे चिन्तनमें खर्च करते, तो एक महीनेमें ही जो फल होता, वह अत्यंत अविश्वासी आदमीको भी चकित कर देता तथा उसको भी विचार-शक्तिपर विश्वास करनेवाला बना देता।

आदमीका मन एक बड़े जलस्थान या सरोवरके समान है। यदि उस सरोवरकी मोरियोंमें गंदी कीचड़ और मिट्टी आदि जम जाय, तो क्या फल हो? इधर सरोवरका पानी सड़ उठेगा, उधर खेती बाग आदि जल न मिलनेके कारण अथवा कम जल मिलनेके कारण सूख जायेंगे। यह भी हो सकता है कि गन्दा जल पौधोंको खराब कर दे। किन्तु यदि उसी जलस्थानकी मोरियोंको साफ कर दिया जाय, तो जहां उस सरोवरका जल शुद्ध हो जायगा, वहां आसपासके जंगलमें मंगल हो सकता है, उजड़े हुए चमन दुबारा हरे हो सकते हैं और कलियाँ खिलकर पुष्प बन सकती हैं। यों सरोवरकी मोरियोंको साफ करनेसे कितना बड़ा परिवर्तन हो सकता है! ठीक यही हालत आदमीके मनकी है। यह बड़े ही दुःखकी बात है कि आदमियोंने अपने मन-स्रोतोंको मूर्खतापूर्ण विचारों, निकम्मी तथा हानिकारक गल्पोंके पाठ तथा विषैली और अनुचित बातचीत और गप्पबाजीकी कीचड़से रोक रक्खा है। इससे एक तरफ आदमीकी ज्ञान तथा बुद्धिसम्बन्धी शक्तियाँ निकम्मी हो जाती हैं और दूसरी ओर उन ही शक्तियोंके अभावके कारण उस आदमीका समस्त जीवनरूपी उद्यान उजड़

जाता है। किन्तु यदि आदमी अपने परिश्रमसे अपने मन-स्रोतोंको इस कूड़ेसे साफ़ कर दे और उसमें गन्दे विचार एकत्र न होने दे, तो उसके मनसे गुप्त ईश्वरीय बुद्धिमत्ता तथा ज्ञानका जल प्रवाहित होकर उसके जीवनको अकथनीय रूपसे सुखी तथा सुन्दर बना देगा और उसको वह सफलता तथा आनन्द प्राप्त होगा, जिसकी वह इस समय इच्छा करता है।

इसपर विश्वास करो। इस चमकते हुए सत्यपर भरोसा करो कि ज्यों ज्यों आदमी सुन्दर, रचनात्मक, विधायक और आशापूर्ण विचारोंको सोचनेकी आदत डालेगा, त्यों त्यों उसका चरित्र उसके अनुसार बनेगा। उसका जीवन उसके चरित्रके अनुसार ढल जायगा और फिर शीघ्र ही उसकी परिस्थितियाँ तथा बाह्य अवस्थाएँ पलटनी आरम्भ हो जायँगी। कारण कि चरित्र ही आदमीका भाग्य है।

इस प्रकार आत्म-विकाशका अर्थ उन्नति, सफलता और सिद्धि हुआ। इसका यही अर्थ है कि सर्वाङ्गसुन्दर तथा पूर्ण जीवन तुम्हारी तरफ़ आ रहा है और कोई भी शक्ति अब उसे तुम्हारे पास आनेसे नहीं रोक सकती।

"प्रति दिन पवित्र विचारोंका मनन करनेसे ध्यानी आदमी पवित्र तथा उज्ज्वल विचारोंको सोचनेकी आदत डालता है। यह आदत उसको सदा पवित्र, उज्ज्वल तथा समुचित रूपसे किये हुए कामोंकी ओर ले जाती है।"

"वह दिन धन्य तथा याद रखनेके योग्य है, जिस दिन एक आदमी यह अनुभव करता है कि वह स्वयं ही अपना रक्षक और भक्षक है, स्वयं उसमें ही उसके समस्त दुःखों तथा ज्ञानाभावके कारण मौजूद हैं और स्वयं उसके अपने ही भीतर समस्त शांति तथा प्रकाशके स्रोत विद्यमान हैं।"

इस लिए सफलता, सुख, आनन्द तथा सिद्धिके जीवनका मार्ग केवल आत्म-राज्य, आत्म-प्रकाश, आत्म-मुक्ति और आत्म-विकाशमें है।

४—आत्म-संयम और मानसिक समता

"दु:खको जीतो और शांतिको प्राप्त करो। बुद्धिमत्ता मनकी शांतिके साथ रहती है। आत्म-संयमी आदमी ही अनन्त सुखको जानते हैं। इसलिए तुम सावधान, निर्भय, विश्वासी, संतोषी और पवित्र बनो। सच्चे ध्यानद्वारा जीवनरूपी समुद्रकी गहराई और प्रेम तथा बुद्धिमत्ताकी बड़ी ऊंचाइयोंको मापो।" —जेम्स एलन

जो आदमी अपने जीवनको अपने मनके साथ मिलान करके देखनेका कुछ भी कष्ट उठायगा, वह यह बात भली प्रकार समझ जायगा कि मनुष्यका जीवन उसके अपने विचारोंकी ही नकल है, ठीक प्रतिमूर्ति है। यदि कोई आदमी अपने व्यवहारको किसी भी हालत अथवा परिस्थितिमें देखे, तो उसे यह मालूम हो जायगा कि वह सहसा स्वेच्छासे काम करता है और उसके काम उसके स्वाभाविक और निश्चित विचारोंके अनुसार ही होते हैं। उदाहरणके लिए आगे लिखी हुई घटना काफी होगी।

किसी दिन हम प्रातःकाल किसी समाचारपत्रमें पढ़ते हैं कि किसी थियेटर अथवा सभामण्डपमें तमाशे या सभाके समय आग लग गई। साथ ही हम यह भी पढ़ते हैं कि बहुतसे उपस्थित आदमियोंके होश उड़ गये, वे भयभीत हो गये और वास्तविक आगकी अपेक्षा कहीं अधिक भिच जाने, दम घुट जाने और कुचल जानेसे ही मर गये। अब आप ही बताइए कि वहाँ लोगोंके होश क्यों उड़ गये तथा वे क्यों सहम गये? क्या यह उनके मनोंकी स्वाभाविक दशा न थी जो कि एक अरक्षित दशा तथा अचानक आनेवाली विपत्तिके समय प्रकट हो रही थी? किसी बड़े उपदेशकका कथन है कि मनकी निश्चित प्रवृत्तियाँ ही आदमीके व्यवहार-मार्गको नियत करती हैं। अकस्मात् जरूरत पड़नेपर अथवा अचानक आई हुई मुसीबतके समय, जब कि सोचने और दलील करनेका समय ही नहीं होता,

आदमी अपने मनकी पहलेसे बनी हुई आदतके अनुसार काम करता है। उसके व्यवहार उसके मनके पूर्वनिर्मित स्वभावके अनुरूप ही होते हैं।

कुछ आदमी अकस्मात् आनेवाली भयंकर आपत्तिके समय मनकी जिस महान् स्थिरताका परिचय देते हैं, वह यों ही संयोग-वश अथवा किसीकी कृपा-विशेषसे नहीं मिलती। और न विपत्ति, भय और हौल दूसरे आदमियोंपर संयोगसे आते हैं। मनकी स्थिरता एक संयत तथा सधे हुए मनका फल है। यह बात याद रखनी चाहिए कि मनका यह संयम और साधना हमारे साधारण दैनिक जीवनमें उस समय बनती रहती है जब कि हमारे समस्त काम शांतिके साथ निर्विघ्न रूपसे व्यतीत होते रहते हैं। विप-रीत इसके जो आदमी संकटके समय बौखला उठता है तथा विपत्तिकालमें जिसके हाथ पाँव फूल जाते हैं, उसके मनकी यह अस्थिरता उसके असंयत, बिना सधे हुए और अशिक्षित मनका ही फल है। ऐसे आदमीका मन परिस्थितिके साधारणसे बहावके साथ बह जाता है, वह गुप्त भयोंसे भरा हुआ होता है, वह भूत-प्रेतोंकी शक्तिमें विश्वास करता है और साधारण-से वहमका शिकार बन जाता है।

प्रतिदिनकी घटनाओंमेंसे एक दो उदाहरण दे देनेसे ऊपरकी बात स्पष्ट हो जायगी। एक आदमी मौतके नामसे काँप उठता है, किन्तु दूसरा आदमी हँसता हुआ मृत्युकी गोदमें जा बैठता है और उसके साथ एक खिलाड़ीके समान खेलता है अथवा एक प्रेमिकाके समान उसका आलिंगन करता है। स्वदेशभक्तिके उच्च भावोंसे भरे हुए बहुतसे नवयुवक फाँसीकी डोरीको फूलोंकी मालाके समान अपने गलेमें डाल लेते हैं, खुशी खुशी जेलखानोंमें चले जाते हैं और हर प्रकारसे अपने आपको देशपर बलिदान कर देते हैं। परन्तु दूसरे आदमी जिनके हृदयोंमें देशके लिए कोई स्थान नहीं है अथवा जिनकी देशभक्तिकी भावना तीव्र नहीं है, वे फाँसी, जेलखानों और बलिदानके नामसे डर जाते हैं। यूरपमें जिस

समय मार्टिन ल्यूथरके अनुयायियोंको पोपके भक्त मार रहे थे, तब एक वीर प्रोटस्टेण्ट, मार्टिनका अनुयायी, खुशी खुशी मरनेके लिए आगे बढ़ता था। भारतवर्षकी वीर राजपूतानियाँ संकटके समय जौहरकी रस्म पूरी करनेके लिए गाना गाती हुई प्रसन्नचित्त-से आगमें प्रवेश करतीं थीं, जब कि दूसरी स्त्रियाँ—जिनके यहाँ जौहरकी रस्म नहीं होती थी—जौहरके दृश्यको देख भी नहीं सकती थीं। आदमी आदमीमें यह भेद क्यों ? एक ही स्थि-तिमें दो आदमियोंके दो व्यवहार क्यों ? इसका उत्तर केवल यही है कि पहले आदमी अपने आपको इस प्रकार सधा लेते हैं कि महान्से महान् संकटपूर्ण स्थितियोंमें भी उनके हृदयोंमें घबराहट पैदा नहीं होती, चित्त स्थिर रहते हैं, जब कि दूसरे आदमियोंने इन संकटपूर्ण हालतोंके लिए अपने आपको तय्यार नहीं किया, अपने मनको इस योग्य नहीं बनाया कि वे आपत्तियाँ खुशीसे झेल सकें।

भारतवर्षके बहुत कम आदमियोंने अँगरेजोंकी हालत किसी जहाजके डूबते समय देखी है। उस समयका दृश्य जितना करुणा-जनक होता है, कहीं उससे अधिक विस्मित करनेवाला तथा शिक्षाप्रद भी होता है। उस समय अँगरेज जिस साहस तथा मनकी स्थिरताका परिचय देते हैं, वह दैवी तथा सराहनीय होता है। मौतके मुखमें होते हुए भी वे लोग नहीं घबराते और न किसी प्रकारकी बेओसानी दिखाते हैं। जहाजके कप्तानकी आज्ञाके अनुसार ही सब काम होता है और सब आदमी ठीक वैसा ही करते हैं जैसा कि उनसे कहा जाता है। जहाजके नियमके अनु-सार पहले बच्चों, स्त्रियों तथा निर्बलोंको बचाते हैं। फिर उन लोगोंको बचानेका यत्न किया जाता है, जिनका बचना उनके वंशके नामको बचानेके वास्ते आवश्यक होता है। फिर कहीं पुरुषों तथा अधिकारी लोगोंका नम्बर आता है। जहाँ तक हो सकता है, सबके बचानेका प्रयत्न किया जाता है; किन्तु समयकी कमी अथवा स्थितिके भयंकर होनेसे जिनको नहीं

बचाया जा सकता, उन्हें जीवन-रक्षक पेटियाँ (life belts) दे दी जाती हैं तथा उन्हें अपनी बुद्धिके अनुसार स्वयं बचनेको कह दिया जाता है। न बचाये जा सकनेवाले आदमी अपने जातीय साहस तथा धैर्यका नाम इतिहासमें अपने खूनसे लिखकर समुद्रके अन्तस्तलमें सदाके लिए उतर जाते हैं। वे लोग अपने बचावके वास्ते कभी जहाजके नियमोंका भंग अथवा जल्दबाज़ी नहीं करते और अपने तथा दूसरोंके जीवनको संकटमें नहीं डालते।

क्या आप समझते हैं कि जिन अँगरेज़ वीरोंने टाइटैनिक तथा ल्यूसीटेनिया नामके डूबते हुए जहाजोंपर इसलिए रहना पसन्द किया कि दूसरे आदमियोंको बचानेका अवसर मिल जाय और स्वयं बड़ी शाँति तथा धैर्यके साथ मृत्युकी प्रतीक्षा की, उन्होंने वह अद्भुत शक्ति, वह महान् हिम्मत, किसी विचित्र ढंगसे, या दैवी माध्यमसे उसी समय प्राप्त की थी? यदि ऐसा ही हुआ होता, तो सब ही आदमियोंको वह शक्ति तथा साहस समान रूपसे मिला होता। नहीं, उस समय प्रकट होनेवाला उनका साहस तथा मनकी स्थिरता कोई अकस्मात् प्राप्त होनेवाली वस्तु न थी। वह तो उन आदमियोंके मनके उस स्थिर व्यवहारका फल थी, जिसने उनके व्यवहारको निश्चित किया था। टाइटैनिक तथा ल्यूसीटेनियाके वीरोंके वास्ते दूसरे आदमियोंकी रक्षाके लिए अपने जीवनको बलि दे देना तथा मौतके मुखमें देवताओंके समान शान्त खड़े रहना उतना ही स्वाभाविक था जितना कि ऐसी हालतमें दूसरे आदमियोंके वास्ते कायरतापूर्ण भय और हौलसे जीवन-रक्षक पेटियों तथा किश्तियोंके लिए चिल्लाना तथा झगड़ना स्वाभाविक होता। प्रश्न हो सकता है, कि ऐसा क्यों होता? इसी लिए कि प्रत्येक आदमी अपने ही विचारोंसे घिरा हुआ है। मूर्खता और बुद्धिमत्ता, शक्ति और दुर्बलता आदमीके भीतर ही हैं, किसी बाह्य वस्तुमें नहीं।

इस लिए आदमीका समस्त व्यवहार, चाहे वह किसी भी हालतमें क्यों न हो, सदा उसके स्वाभाविक विचारोंकी प्रकृतिको प्रमाणित करता है।

एक भद्र महिला थी। उसने अपने जीवनके पूरे पाँच वर्षों तक प्रत्येक दिनका कुछ भाग अपने मनको संस्कृत बनाने तथा महात्माओंके विचारोंके अध्ययन करनेमें व्यतीत किया था। यद्यपि वह पूर्ण युवती थी, तथापि आत्म-संयम तथा मानसिक साधनाके अभ्यासको छोड़नेके स्थानपर कभी कभी वह अपने सुखका त्याग कर देती थी। उसकी बातोंको बहुत कम आदमी समझते थे और उससे सहानुभूति रखनेवाले आदमी तो बहुत ही कम थे। प्रायः उसके अविचारशील मित्र तथा मिलने-जुलनेवाले उसका उपहास–ठट्ठा–करते तथा उसे साध्वी, बावली और धर्मांध पगली कहते थे। किन्तु उसने उनकी बातोंकी कुछ भी परवाह न की और वह अपने मार्गपर खुशी, विचारशीलता तथा आत्म-संतोषके साथ चलती रही। एक दिन जब कि वह घरमें अकेली काम कर रही थी, खौलते हुए पानीका एक बरतन उसके पास ही फट गया और जलता हुआ पानी उसके मुख और गरदनपर गिर गया। कुछ ही समय पीछे उसकी माँने उसे एक शीशेके सामने खड़ी होकर अपने जले हुए शरीरपर रूईसे तेल लगाते देखा। उस नवयुवतीने पूर्ण धैर्यके साथ कहा कि मैंने इस तेल लगानेके कामको शीघ्र करना इस लिए आवश्यक समझा कि मुझे विश्वास था कि मैं शीघ्र ही अन्धी हो जाऊँगी। डाक्टरोंने बड़े आश्चर्यके साथ कहा कि उन्होंने ऐसे भयंकर दुःखमें मनकी इतनी स्थिरता, ऐसी शांति और इतना धैर्य कभी नहीं देखा। उन्होंने यह भी कहा कि यदि वह युवती ऐसा न करती अथवा इससे उलटा व्यवहार करती, तो उसका मुख इतना सुन्दर तथा बिना दागवाला न होता जैसा कि वह पहले था और उसकी दृष्टि कायम न रहती। इतने वर्षोंके आत्म-संयम तथा मानसिक साधनाके बिना वह स्त्री उलटा ही व्यवहार करती तथा उसके परिणाम भयंकर ही होते।

प्रिय पाठको, आप ऐसी कठोर परीक्षाके दिनके लिए शक्ति प्राप्त करने और अकस्मात् आनेवाली आपत्तियोंका साहस-पूर्वक मुकाबला करनेके लिए क्या कर रहे हैं? ऐसे कष्ट तथा संकट झेलनेके लिए आप किस प्रकार तय्यार हैं? यदि आप किसी भी प्रकार अपने मनको विचार करनेके लिए नहीं सधा रहे हैं, यदि आप भिन्न भिन्न मुआमलोंपर विवाद करना तथा उन्हें जाँचना नहीं सीख रहे हैं, यदि आप प्रतिदिन आत्म-संयमका अभ्यास नहीं करते और यदि आप परिश्रम तथा लगनसे अपनी मानसिक साधना तथा शक्तिको पुष्ट नहीं करते, तो आप निस्सन्देह संसारके उन आदमियोंमेंसे एक हैं, जो आपत्तिके समय अवश्य औसान खो बैठेंगे, जो संकटको और भी बढ़ा देंगे, जो शायद आत्म-संयमके अभावसे आत्मरक्षाके प्रत्येक अवसरको खो देंगे और जो अपने स्वाभाविक विचारोंका शिकार बन जायेंगे।

अपने आपसे पूछो कि तुम ऐसी अवस्थामें क्या करोगे? कड़ी जाँचके प्रकाशको अपने मनमें ले जाकर देखो। अपनी समस्त दुर्बलताओं तथा अपनी असफलताओंके वास्ते अपने आपको दोषी ठहराओ। यदि ऐसा हो, तो इस बातको स्वीकार करो कि इस मुआमलेमें तुमने सचाईसे काम नहीं लिया है, कारण कि अपनी भूलको स्वीकार करना बुद्धिमत्ताकी ओर एक पहला कदम है, और अपने आपको जानना शक्ति-प्राप्तिका निश्चित आरम्भ है।

५—स्वतंत्रता

" दिव्य स्वतंत्रता ईश्वरकी श्रेष्ठ वस्तु है । "

" यदि तुम परिवर्तनके चक्रसे बँधे हो और उस पाशसे मुक्त होनेका कोई उपाय नहीं है, तो कहना पड़ेगा कि निर्बन्ध आत्माका हृदय उसके लिए अभिशाप है और सब वस्तुओंका रहस्य एक निर्दय यंत्रणा है । "

तुम बद्ध नहीं हो । पदार्थोंका रहस्य मधुर है । आत्माका हृदय स्वर्गीय विश्रांति है । संतापकी अपेक्षा इच्छाशक्ति अधिक बलवान् है । शुभ शुभतरसे गुज़रकर श्रेष्ठको प्राप्त होता है ।

—सर एडविन अर्नाल्ड

जब तक कोई आदमी अपने बन्धनमें है, तब तक वह न तो स्वतंत्रताके आनन्दको समझ सकता है और न वह उसे अनुभव कर सकता है । आदमी अपने बन्धनमें उस समय होता है जब कि वह अपने भावोद्रेकोंके वशमें होता है और उसके कार्योंपर युक्तिका अधिकार तथा वश न होकर तात्कालिक मानसिक उत्तेजनाओंका वश होता है, जो कि इत्तिफाकसे उस समय पैदा होती हैं ।

आदमी कई बार यह कहते सुने जाते हैं कि इस समय वे कार्य करना नहीं चाहते अथवा अब वहाँ जानेको उनका जी नहीं चाहता । इस प्रकारकी बातें दास कहा करते हैं, स्वतंत्र पुरुष या स्त्री नहीं । दास अपने मनोद्रेकोंके कैदखानेमें ही बंद होते हैं ।

एक और प्रकारकी दासता भी होती है, जो निस्सन्देह लोहेकी कड़ियोंके समान कठोर होती है और स्त्री-पुरुषोंको बन्धनमें रखती है । यह दासता स्वतंत्रताके समान दिखाई पड़ती है इसे रुचि और अरुचि कहते हैं ।

जब तक आदमी रुचियों और अरुचियोंको अवसर देता है, ठीक तब तक उसका आत्मा स्वतंत्रतासे अपरिचित ही रहता है।

पक्षपात और तरफदारी, स्वार्थलोलुपता और सुखेच्छा, घबराहट और दुखी होना, कुढ़ना और रंज मानना, ईर्ष्या करना और असंतुष्ट रहना, तथा पश्चात्ताप करना ये सब बन्धन ही हैं। जब तक इनमेंसे किसी एकको भी अवसर दिया जायगा, तब तक स्वातंत्र्य अज्ञात ही रहेगा।

क्या आप स्वतंत्रताकी इच्छा करते हैं? क्या आप इस कथनका अर्थ समझना चाहते हैं कि स्वतंत्रता परमात्माकी सन्तानकी महनीय वस्तु है? तब आपको उन वस्तुओंपर विजय प्राप्त करनी चाहिए, जिन्होंने भूतकालमें आपपर विजय प्राप्त कर रक्खी थी। आपको अपने स्वयंसृष्ट बन्दीगृहके दरवाज़े खोल देने चाहिए तथा आगेके लिए दास और बन्दी न रहना चाहिए।

अपनी मानसिक अवस्थाओंको वशमें करो।

उत्तेजनाओंका शासन अस्वीकार कर दो।

अपने सब कामोंका आधार स्थिर तथा सावधान युक्तिको बनाओ। अर्थात् हरएक कामको स्थिर-चित्तसे युक्तिपूर्वक सोचकर करो।

अपने आपसे कहो कि यह मामला उचित और अनुचितका है, और मेरे भावोंसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसमें प्रश्न 'मुझे क्या पसंद है' नहीं होना चाहिए, वरन् 'मुझे क्या करना आवश्यक है' यह होना चाहिए। बच्चे भले ही कहें कि मुझे यह बात अथवा वह बात पसन्द नहीं; परन्तु स्त्रियों तथा पुरुषोंके मुखसे ऐसे शब्द निकलते शोभा नहीं देते। यदि तुम्हारा जीवन तथा व्यवहार, तुम्हारी रुचियों तथा अरुचियोंके अधीन है, तो तुम एक दुर्बल गुलाम हो।

पक्षपात और तरफदारी आदमीकी आँखोंको वास्तविकताकी ओरसे अन्धा कर देती है। जो आदमी पक्षपात तथा तरफदारी करनेवाले होते हैं, वे किसी चीज़को उसके वास्तविक रूपमें नहीं देख सकते। और जो कोई आदमी इनमेंसे किसी एकके भी

अधीन होता है, किसी एकसे भी अभिभूत होता है, वह ठीक रूपसे निश्चय करनेके अयोग्य होता है। वह उस आदमीके समान है, जिसकी आँखोंपर रंगीन चश्मा लगा हुआ है। जो कुछ भी वस्तु वह उस चश्मेमेंसे देखता है, वही चश्मेका रंग धारण कर लेती है। पक्षपात और तरफदारी तो गुलामोंके चलनेकी पगडण्डियाँ हैं। बुद्धिमान् आदमी सदा सिद्धान्तपर चलते हैं, तथा ईमानदारीसे न्याय करते हैं।

विषयोंका दास सदा इच्छा करता रहता है: परन्तु वह किसी भी वस्तुको प्राप्त नहीं करता।

विषय-वासना अपने उपासकको बड़ी लम्बी चौड़ी आशायें बँधाती है; किन्तु जिस प्रकार एक आदमी पर्वतकी चीजोंको देखकर उन्हें प्राप्त करनेके ख्यालसे आशा बाँधे और हाथ फैलाये खड़ा रहता है, उन्हें प्राप्त नहीं कर सकता, उसी प्रकार विषय-वासना भी अपने उपासकको धोखा दे देती है, उसको इष्ट सुख कभी प्राप्त नहीं होते। वह भी उनके वास्ते सदा तड़पता ही रहता है। यदि उसकी एक इच्छा पूरी होती है, तो दूसरी सामने आ खड़ी होती है। उसकी इच्छाएँ सदा बढ़ती रहती हैं। वह सदा 'एक और' 'एक और' कहता है। जिस तरह नट लोग तमाशा करते समय कहा करते हैं 'कसर रह गई', 'कसर रह गई', उसी तरह विषय-लोलुपी आदमीकी इच्छाओंके पूरा होनेमें भी सदा कसर रह जाती है। शायद ऐसे ही आदमियोंके लिए संस्कृतका निम्न श्लोक कहा गया है:—

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यंति,
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।

इसका भावार्थ यही है कि जिस तरह अग्नि हवन-सामग्रीके पड़नेसे कभी शांत नहीं होती, बढ़ती ही रहती है, वैसे ही आदमीकी इच्छायें भी पूरी करनेसे पूरी नहीं होतीं, बढ़ती ही जाती हैं। इस लिए जो आदमी स्वतंत्रताको समझना चाहता है, उसे विषय-वासनाओं तथा इच्छाओंका त्याग कर देना चाहिए।

सुखकी वासना तो शायद निकृष्ट श्रेणीका बन्धन है, जो स्त्री-पुरुषोंको दासताके गम्भीरतम गढ़ेकी ओर ले जाता है। जो आदमी सुखकी इच्छाको छोड़ देता है, वह सुखसे भी अच्छी वस्तुको प्राप्त करता है। उसे आनन्द और शांति प्राप्त होते हैं।

घबड़ाना तथा शिकायत करना, अज्ञान और आध्यात्मिक अन्धकारके निश्चित चिह्न हैं।

क्या छटपटाने और शिकायत करनेसे भार कम हो जाता है? क्या इनसे कठिनाई दूर हो जाती है? और क्या इनसे मार्ग सुगम बन जाता है? यदि ऐसा होता, तो छटपटाना, कुढ़ना तथा शिकायत करना बुद्धिमत्ता होती। परन्तु ये तो अन्धकारको अधिक तीव्र कर देते हैं, कठिनाइयोंको बढ़ा देते हैं, और पैरोंको लड़खड़ाकर कठोर आपत्तियोंमें डाल देते हैं।

स्वतंत्र आदमी अपनी स्थितिपर शांतिके साथ विचार करता है। न वह अपनी आपत्तियोंसे घबराता है और न किसीसे शिकायत करता फिरता है। वह न्यायबुद्धि तथा युक्तिके साथ हरएक बातको तोलता है, आगा-पीछा सोचता है और अपनी सब आपत्तियोंसे निकलनेका मार्ग ढूँढ़ लेता है।

बुद्धिमान् आदमी कभी दूसरे आदमियोंसे ईर्ष्या नहीं करता और जो कुछ उसे प्राप्त होता है, उससे असंतुष्ट नहीं होता। वह जानता है कि ईर्ष्या झुलस देनेवाला तथा सुखा देनेवाला विष है। वह तो दूसरोंके सुख तथा सौभाग्यपर प्रसन्न होता है। वह यह भली प्रकार जानता है कि जिसका वह अधिकारी है, उसे वही प्राप्त होगा, ईर्ष्या करनेसे उसका भला नहीं हो सकता। वह जानता है कि वह अपने स्थानपर खड़ा है और उसका पड़ौसी अपने स्थानपर। इस बातको वह भली प्रकार समझता है कि असंतोष करना व्यर्थ तथा मूर्खतापूर्ण है। यदि वह आदमी अपने पास होनेवाली वस्तुसे किसी अधिक महान्, अधिक उच्च, अधिक सुन्दर तथा अधिक संतोषजनक वस्तुकी आकांक्षा करता है, तो वह अपनी समस्त शक्तियोंको उसकी प्राप्तिके वास्ते

लगा देता है। वह प्रसन्नता तथा विश्वासके साथ उसकी प्राप्तिके लिए काम करता है और अपनी सारी शक्ति तथा इच्छाकी सहायतासे उसकी आशा करता है। प्रतिदिन वह प्रसन्नताके साथ देखता है कि सहज सहज वह वस्तु उसे प्राप्त हो रही है। किन्तु ईर्ष्यालु और असंतोषी आदमीकी हालत और ही होती है। इष्ट वस्तुओंको प्राप्त करना तो उनके लिए बड़ी बात है, वे कुढ़-कुढ़कर तथा हृदयमें घुल-घुलकर संसारमें अपने आपको पहलेसे भी अधिक अयोग्य बना लेते हैं। और जिस समय उनके साहसी पड़ोसी अपने बहुत बलसे प्राप्त की हुई वस्तुओंका आनन्दके साथ भोग करते हैं, तब वे उनकी तरफ़ खुले हुए मुँहसे तथा आँखें फाड़-फाड़कर आश्चर्यके साथ देखा करते हैं।

उत्तेजनाओं तथा विषय-वासनाओंका दास सदा पाप और पश्चात्ताप करता रहता है। आज एक काम करता है और अगले दिन उसपर पश्चात्ताप करता है। जो आदमी पाप करके पछताता रहता है और जो पाप करके शोक प्रकट करता रहता है, वह न तो बुद्धिमान् ही है और न स्वतंत्र: वह तो दासतामें बँधा है। बुद्धिमान् तथा स्वतंत्र आदमी युक्ति, विचार और न्यायबुद्धिसे काम करते हुए पश्चात्ताप नहीं करते। यह जानते हुए कि उनके काम उच्चतम न्यायबुद्धि और पवित्रतम विश्वासके अनुकूल थे, उन्हें पश्चात्ताप करनेकी जरूरत ही नहीं है। शोक प्रकट करनेको वे समय तथा शक्तिका अपव्यय समझते हैं: कारण कि शोक करनेसे व्यतीतका कुछ भी अंश नहीं पलट सकता और किया हुआ काम अनकिया नहीं हो सकता। 'अब पछताए होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत' की कहावत ठीक ही है। इस लिए स्वतंत्र आदमी शक्तिशाली, शांत तथा न्यायवान् होता है: सब बातों और सब स्थितियोंमें विवेकके प्रकाशमें काम करता है। यह प्रकाश उसके हृदयके सिंहासनपर उस प्रेमके साथ निवास करता है, जिसकी दृष्टिमें, वचनमें, तथा कर्ममें पाप नहीं है।

इस प्रकार आत्मा स्वतंत्रताके विशाल मन्दिरमें प्रवेश करता है।

६—परिवर्तन

" प्रत्येक आदमी अपने विचारोंके तंग अथवा विशाल चक्रमें घूमता है । + + + आदमीकी आन्तरिक अवस्था उसकी बाह्यावस्थाकी नींव है । + + + पौद्गलिक शरीर मनकी साक्षात् मूर्ति है । घटनाएं विचारोंके स्रोत हैं । परिस्थितियाँ विचारोंके समूह हैं । +++ वस्तुएँ विचारोंकी अनुगामिनी हैं ++++ अपने विचारोंको बदल दो, वस्तुओंमें नवीन व्यवस्था स्वयमेव आजायगी । + + + + श्रेष्ठ आदमी वही है, जिसको अच्छे विचार सोचने और अच्छे काम करनेकी आदत है । + + + + मनकी बदली हुई प्रवृत्ति आदमीके चरित्र, आदतों और जीवनको पलट देती है । "

—जेम्स एलन

अपनी भूल और दुर्बलताके ज्ञानके साथ ही साथ हमारे हृदयोंमें प्राकृतिक रूपसे अपनी भूलको दूर करने तथा अपनी दुर्बलताको शक्तिमें पलट देनेकी इच्छा पैदा होगी । यथा, यदि आप यह अनुभव करते हैं कि आपके पास वह मानसिक शक्ति नहीं है जो कि आपको अचानक आनेवाली आपत्तिके समय शान्त तथा स्थिरचित्त रक्खेगी, तो आपको अपनी साधारण स्थिति तथा आदतोंकी ओर ध्यान देना अच्छा ही होगा, कारण कि एक जञ्जीर उतनी ही मज़बूत होती है जितनी मज़बूत कि उसकी कमज़ोरसे कमज़ोर कड़ी होती है । इसी प्रकार किसी भी प्रकारकी कमज़ोरी अथवा किसी भी प्रकारकी कमी आदमीकी सामूहिक अयोग्यतामें अपना भाग रखती है । क्या आप आलस्यके शिकार हैं ? क्या आपकी गति मन्द और आपके पाँव बोझल हैं ? क्या आप आपने काममें विशेष रूपसे ढीले हैं ? यदि ऐसा है, तो आपको अपने चरित्रकी उसी दुर्बलताको दूर करनेसे काम आरम्भ करना चाहिए और इस बातका दृढ संकल्प कर लेना चाहिए कि आप अपनी उस दुर्बलताको शक्तिमें पलट देंगे । अपनी गतिको तेज़ करो । जब कभी आप अपनेको गिरता हुआ अनुभव करो और अपने कामको मन्द या ढीला पाओ,

तभी अपने काममें संलग्नता तथा सच्चे दिलसे लग जाओ। एक गहरी साँस डायफ्रॉम—छाती और पेटके बीचके भाग—के नीचेसे आरम्भ करके लो। साँसमें अपने इष्ट उद्देश्यको भी रक्खो, अर्थात् उस समय अपने मनमें अपने आदर्शका स्मरण करो। फिर इस साँससे अपने समस्त शरीरको फुला लो। तत्पश्चात् उसे सहज सहज समान रूपसे धैर्यपूर्वक नाकद्वारा बाहर निकाल दो। साँसको निकालते समय अपने मनमें संकल्प करो कि तुम चुस्त, शक्तिसम्पन्न, और विश्वस्त बनोगे। जब कभी तुम अपने आपको अपनी पुरानी आदतके अधीन पाओ, तभी ऐसा करो। इससे तुम अपनेमें निस्सन्देह एक निश्चित परिवर्तन होता हुआ पाओगे। याद रक्खो, किसी भागकी दुर्बलताको दूर करना अथवा उसका सुधार करना समस्तको उन्नत बनाना है, और एक भी त्रुटिपर विजय प्राप्त करना चरित्रके प्रत्येक अंशमें दृढता पैदा करना है।

यहाँपर यह बात समझा देनी बहुत जरूरी मालूम होती है कि कोई भी काम एक दो दिनमें नहीं होता। कोई त्रुटि एक दो दिनमें दूर नहीं होती और किसी प्रकारकी शारीरिक, मानसिक अथवा आध्यात्मिक उन्नति एक दो दिन या दस पाँच दिनके अभ्याससे नहीं होती। इन कामोंके होनेमें काफी समय लगता है और इस समयमें लगातार नियत रूपसे दृढ़तापूर्वक अभ्यास करनेकी आवश्यकता है। प्रायः देखा गया है कि नवयुवक किसी अभ्यासको एक दो सप्ताह करनेके पश्चात् ही कोई बड़ा भारी परिवर्तन अथवा कुछ उन्नति प्रत्यक्ष अनुभव करना चाहते हैं और जब उनको वह परिवर्तन या उन्नति, वास्तवमें होते हुए भी, प्रत्यक्ष रूपसे नजर नहीं आती, तब वे हतोत्साह तथा निराशसे होकर उस अभ्यास या साधनकी उपयोगितामें अविश्वास करने लगते हैं और उसे छोड़ देते हैं। लोगोंको इस बातका विश्वास दिलाना आसान काम नहीं है कि इस एक दो सप्ताहके अभ्याससे उन्होंने इष्ट दशामें कुछ उन्नति की है, कारण कि इसको हम विज्ञानशालामें होते हुए किसी प्रयोग या प्रदर्शनके समान नहीं

दिखा सकते। इसको तो हम केवल बुद्धि या दलीलसे ही समझा सकते हैं। इस पुस्तकको जिन्होंने अबतक समझकर पढ़ा है, वे जानते हैं कि हमारा हरएक विचार अपने अनुरूप परमाणुओंको हमारी तरफ खींचता है और जब उन परमाणुओंकी अधिकता हो जाती है, तब हम अपने शरीरमें एक विशेष परिवर्तन पाते हैं। यह भी वे जानते हैं कि लगातार अभ्याससे आदमी कुछसे कुछ बन सकते हैं। अब जरा सोचो कि यह परिवर्तन एक दिनमें नहीं हुआ, वरन् लगातार कोशिशोंका फल है। हमें यह बात माननी पड़ेगी कि जो शक्ति या परिवर्तन आज हम अपनेमें विशाल रूपमें अनुभव करते हैं, वह हमारे अभ्यासके आरम्भके दिनसे शुरू होकर सहज सहज बढ़ा है। इतनेपर इस बातके माननेसे इन्कार नहीं हो सकता कि जिस दिन आपने अभ्यास शुरू किया था, उसी दिन उस शक्ति या परिवर्तनका आरम्भ हो गया था, उसके बीज बोये गये थे। और जिस शक्ति या परिवर्तनका आरम्भ हो गया है, वह तो तुम्हारे अभ्याससे दिन प्रतिदिन कुछ न कुछ पुष्ट हो रहा है, बढ़ रहा है। फिर आप कैसे कह सकते हैं कि आपने एक दो सप्ताहके अभ्याससे कुछ प्राप्त नहीं किया?

शायद यहाँपर यह बात तुम्हें फिर याद दिलानी कुछ उपयोगी हो कि हमारे समस्त स्वभाव, हमारी तमाम दुर्बलताएँ, हमारी सब त्रुटियाँ और प्रत्येक क्षेत्रमें हमारी समस्त परिमितताएँ केवल हमारे विचारोंकी आदतें ही हैं। किसी विचारका मनमें बार-बार मनन करनेसे, उसे बार-बार दुहरानेसे, अन्तमें वही विचार एक आदत बन जाता है। कुछ समयके पश्चात् मस्तिष्क अपने आप ही काम करता है और जिस विचारका बहुत समय तक मनन किया जाता है, वह एक दृढ़ स्वभाव बन जाता है। जिस रूपमें हम मनुष्यको पहिचानते हैं, वह सब उसकी विचारधाराका फल है। हम अपने विचारोंकी पुनरावृत्ति मात्र हैं। इस लिए अपने मानसिक झुकावको पलटनेके लिए तुम्हें अपने विचारोंको पलटना चाहिए। मैं इस बातकी परवाह नहीं करता कि तुम किन किन पापोंमें लिप्त हो, तुममें कौन कौनसी दुर्बल-

ताएँ हैं और तुम्हें भूतकालमें क्या क्या असफलताएँ हुई हैं, किन्तु मैं इस बातकी घोषणा करता हूँ कि तुम अपने विचारोंको पलटनेसे उनको पूर्णतया पलट सकते हो। समस्त जीवन, समस्त काम, समस्त व्यवहार और समस्त चरित्रके आधार विचार ही हैं।

क्या तुम सुस्त, क्रोधी और आलसी हो? यदि ऐसा ही है, तो तुम्हारे पूर्व विचार ही तुम्हारे वर्तमान कामोंके जन्मदाता हैं। अपने विचारोंको पलट दो। प्रत्येक प्रातःकालके दस पाँच मिनिट शक्ति, तेज़ी और चुस्तीके विचारोंको सोचनेमें खर्च करो। अपने आपको अपने विचारोंसे मिलाकर चलाओ। अपने विचारोंपर दृढ रहो और दिनमें बीसियों बार अपने मनको इन विचारोंपर लगाओ। फिर शीघ्र ही तुम्हारा मस्तिष्क अपने लिए काम करना आरम्भ कर देगा और तुम्हारे सब कामोंमें अन्तर हो जायगा।

विचार करना ही वैसा बन जाना है।

पाप या बुरी आदत विचारकी आदतके सिवाय और क्या वस्तु है? पवित्रता या सद्गुण भी विचारकी एक आदतके सिवाय और क्या हैं? एक पापी आदमी इसी लिए पापपूर्ण काम करता है, क्योंकि उसके विचार पापमय हैं। एक पवित्र आदमी इसी लिए पवित्र है, क्योंकि उसका मन पवित्रतासे विचार करता है। अब हम समझ सकते हैं कि क्यों यह उपदेश दिया गया है कि अपने मनको वैसा ही बनाओ जैसा कि प्रभु मसीहका था। अब यह बात भी स्पष्ट है कि उन्होंने क्यों यह आदेश दिया कि जो बातें सत्य, न्याययुक्त, प्रेमपूर्ण और प्रशंसायोग्य हैं, यदि उनमें कुछ भी भलाई या प्रशंसा है, तो उनका विचार करो। जिस महात्माने ऊपरका उपदेश दिया है, वह जानता था कि सत्यका विचार करनेसे आदमी सत्यरूप बन जाता है। ईमानदारी और पवित्रताका मनन करनेसे आदमीका जीवन अनिवार्य रूपसे ईमानदार और पवित्र हो जाता है। प्रेमका विचार करनेसे आदमीके हृदयमें समस्त सुन्दर तथा अच्छी चीजोंके लिए प्रेम उत्पन्न हो जाता है। जब मन सौन्दर्य तथा प्रेमका विचार करता है, तब जो

कुछ भी भद्दा अथवा खराब करनेवाला होता है, वह सब अच्छाईमें बदल जाता है; कारण कि स्वाभाविक रूपसे प्रेमका विचार करनेवाला अस्वच्छताको पसन्द नहीं करता। जिसका मन अच्छी बातोंका मनन करता रहता है, भला वह किस तरह अपने होठोंपर उन शब्दोंको लायगा, जो कि बदनामी, ढोंग और दूसरोंकी बुराई प्रकट करते हैं! जो आदमी लगातार पुण्यका विचार करता है, उसके लिए पापमें गिरना कितना असम्भव है! इस प्रकार हम देखते हैं कि एक आदमीके विचार ही उसके जीवन, चरित्र तथा भाग्यको निश्चित करते हैं।

इसी तरह इस युक्तिको तुम अपने समस्त जीवनमें लागू कर सकते हो। जो कुछ तुम बनना चाहते हो और यदि वैसे तुम नहीं हो, तो इसका इलाज तुम्हारे पास ही है। जैसा तुम बनना चाहते हो, उस आदर्शका विचार करो और तुम वैसे ही बन जाओगे।

अपने विचारोंमें परिवर्तन किये बिना तुम कुछ समयके लिए जबरदस्ती बाहरसे लीपा-पोती कर सकते हो, तुम धर्मको माननेकी भी घोषणा कर सकते हो, धार्मिक क्रियाकाण्डके कट्टर पालनेवाले भी बन सकते हो और इससे अपने शरीरका बाह्य भाग स्वच्छ हुआ समझ सकते हो, किन्तु जब तक तुम विचारोंमें परिवर्तन करके अपने हृदयको न पलटोगे, उस समय तक समस्त बाह्य परिवर्तन अल्पकालिक ही रहेगा और तुम्हारा पतन एक निश्चित बात होगी।

जो कुछ भी तुम अपने अन्तरात्मामें—मनमें—सोचते हो, वही तुम्हारे जीवनमें बाहर प्रकट हो जायगा और जब तक तुम्हारी विचार-धारामें परिवर्तन न होगा, तब तक तुम्हारा बाह्य आचार और नियम-पालन साथ न देगा। इस लिए यदि तुम अपने जीवनमें वास्तविक परिवर्तन चाहते हो और चाहते हो कि यम नियम आदिका पालन तुम्हारा सच्चा उपकार करे, तो पहले अपने विचारोंमें परिवर्तन करो।

७—समतौलता (Balance)

" अतः जो कुछ हमें सीखना है, वह है पारस्परिक तुलनात्मक सम्बन्ध अर्थात् परमात्माके राज्यमें प्रत्येक वस्तुका औचित्य और सापेक्ष स्थान मालूम करना। तुम्हारे जीवनके प्राकृतिक पहलू और आध्यात्मिक पहलूमें एकलयता या समन्वय होना चाहिए और कोई भी पहलू, अविकसित अथवा अधूरा न रहना चाहिए। + + + + अपने जीवनके ठीक केन्द्रपर लक्ष्य करो। जीवनके ऐक्यको मुख्य रूपसे और उसके प्रमाण (Proportion) को गौण रूपसे ध्यानमें रक्खो। "

—बिशप वैब

" जो एक उद्देश्यको अपने सामने रखता है, उसे सब वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं। "

—ब्राउनिङ्ग

ऊँचे-तुले चरित्रसे सुन्दर और वांछनीय कोई भी वस्तु नहीं है और न उससे अच्छी किसी दूसरी वस्तुकी आदमी इच्छा कर सकता है, जिस चरित्रमें अनुपातका सौन्दर्य प्रकट है, जो कि सर्वांग रूपसे पुष्ट किया हुआ है। कभी कभी हमें ऐसे चरित्रोंपर भी विचार करना पड़ता है जिनमें कि स्त्री या पुरुष अपने चरित्रके एक पहलूको विकसित कर लेते हैं और दूसरे समान रूपसे आवश्यक पहलूकी उपेक्षा कर देते हैं। हमारी प्रकृति त्रिगुणात्मक है—(१) शारीरिक, (२) मानसिक और (३) आध्यात्मिक। तुम्हें याद होगा कि इस पुस्तकके पूर्वार्धमें तीन संस्कार बताये थे और वहाँ इन संस्कारोंके अतिरिक्त चरित्रसम्बन्धी संस्कार भी बताया था। हमारे मौजूदा मतलबके लिए उपर्युक्त तीन भेद काफी हैं। वास्तवमें पूर्ण पुरुष या पूर्ण स्त्री वही है, जिसने प्रकृतिके सभी अंगोंको समान रूपसे विकसित किया है और इस तरहसे अपनी समस्त शक्तियोंको ठीक रूपसे एकत्रित करके अपने चरित्रको सर्वांगपूर्ण बनाया है, अपने आपको आदर्श पुरुष या आदर्श स्त्री बनाया है।

बौद्धिक तथा आध्यात्मिक अंशकी उपेक्षा करके, प्रकृति अथवा मानव-शरीरके पाशविक अंशको पुष्ट करना एक भयंकर बात है। इस एकतरफा पुष्टिके कटु फलोंको देखनेके लिए हमें अपने आसपास ही देखनेकी जरूरत है, दूर जानेकी आवश्यकता नहीं। जो आदमी केवल इन्द्रिय-सुखों और शारीरिक वासनाओंकी तृप्तिके वास्ते जीवित है और जिसके जीवनका उद्देश्य 'खाओ, पीओ, मौज उड़ाओ' है, निस्सन्देह वह आदमी परमात्माकी इस सुन्दर पृथिवीपर एक कलंक है, भार है। क्यों कि उसमें सभी परमात्मीय गुण होते हुए भी वह एक पशुके समान नीच वृत्तियोंमें फँसा हुआ है। खेदकी बात है कि देवता बननेवाला आदमी राक्षस बन जाय! जिस आदमीमें ईश्वरीय अंश विद्यमान है, वही मनुष्य अपने मुखसे हमें अपने पतित जीवनकी दुखभरी गाथा सुनाता है। जिस आदमी-का शरीर सूजा हुआ, भद्दा, लज्जाकर, दुखी और रुग्ण है, वह इस सत्यकी घोषणा करता है कि जो आदमी विषय-वासना-ओंकी तृप्तिमें अन्धाधुंध, विना आगा पीछा देखे, लगा रहता है, वही शारीरिक अपवित्रताओं, यातनाओंको सहता है। आदमी एक शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीव है। निस्सन्देह एक आदमीको शारीरिक रूपसे भी आदर्श होना चाहिए। परन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि वह शरीरवाला एक पतित जीव अथवा विषयी पशु हो। वास्तवमें आदर्श स्त्री या पुरुष वही है, जो समस्त पाशविक वृत्तियों तथा विषय-वासनाओंको रखता हुआ भी उनके ऊपर अपने सुसंयत तथा सुशासक मनसे राज्य करता है, जो अपने शरीरका स्वामी है, जो अपनी समस्त विषय-वासनाओंकी लगामको अपने दृढ तथा धैर्ययुक्त हाथोंमें पकड़कर अपनी प्रत्येक इन्द्रियसे कहता है कि तुम्हें मेरी सेवा करनी होगी, न कि मालिकी। मैं तुम्हारा सदुपयोग करूँगा, दुरुपयोग नहीं। ऐसे स्त्री या पुरुष अपनी समस्त पाशविक वृत्तियों तथा वासनाओंकी शक्तियोंको पूर्ण स्त्रीत्वमें या पूर्ण पुरुषत्वमें परिणत कर देते हैं।

विलास मृत्यु है और संयम जीवन है। निवृत्ति-भाव—त्याग-भाव, ही मनुष्यत्व है। सच्चा रसायनशास्त्री वही है, जो विषय-वासनाओंके लोहेको आध्यात्मिक तथा मस्तिष्कीय शक्तियोंके स्वर्णमें पलट लेता है, विषय-वासनाओंसे भी शक्ति प्राप्त करता है। कुछ आदमी विषय-वासनाओंको मार देनेका, उन्हें दबानेका उपदेश देते हैं; परन्तु हम तो यह अधिक अच्छा समझते हैं कि उन विषय-वासनाओंको उनकी समस्त शक्तियोंसहित उन सुन्दर गुणोंमें पलट दो, जिनसे एक मनुष्य भी देवता बन जाता है। वे गुण क्या हैं? प्रेम, नम्रता, दया, शक्ति, उत्साह, संकल्पकी दृढ़ता तथा आकांक्षा और वे सब गुण जो कि आदमीके जीवनको वैभवशाली तथा विजयी बनाते हैं। इसके साथ हमें शरीरका प्रतिदिन पूरा ध्यान रखना चाहिए तथा इसे सुन्दर बनानेका प्रयत्न करना चाहिए। शरीर तो अमर आत्माका वेश और उसका पवित्र मन्दिर है। इस शरीरको इस आत्माके अनुरूप ही अच्छा बनाना चाहिए। शरीरको शुद्ध, सात्त्विक और शक्तिदायक भोजन देना चाहिए। इसका पोषण ठीक रूपसे होना चाहिए और इसको स्वच्छ (बहुमूल्य नहीं) वस्त्र पहनाने चाहिए, जिससे कि यह शरीर परमात्माकी सुन्दर मूर्ति बन जाय।

दूसरी तरफ आत्मा और शरीरकी उन्नतिका ध्यान न रखकर, केवल मनको ही पुष्ट करते रहनेमें भी हानिकी सम्भावना है। न तो आदमीका मन ही सब कुछ है और न उसका शरीर ही सब कुछ है। और इनमेंसे एककी उन्नतिकी तरफ झुक जाना उतना ही आसान है जितना कि दूसरेकी उन्नति तरफ झुक जाना। इस लिए उचित यही है कि सब ओर समान रूपसे उन्नति की जाय। हमारे बड़ेसे बड़े विज्ञानवेत्ता, महान् बुद्धिमान आदमी, बड़े बड़े अन्वेषक और विद्वान् वे ही पुरुष हुए हैं, जिन्होंने अपने मन और बुद्धिका उच्चतम सीमा तक विकाश करनेके साथ जीवनके मानवीय पहलूकी उपेक्षा नहीं की है, वरन् अपने हृदयोंको प्रेमी और प्रेम करने योग्य, नम्र, सहानुभूतिपूर्ण, और दयालु बनाया है।

वहाँ हमें ऐसी विद्वत्तासे सावधान रहना चाहिए, जो एकांतवासिनी, रूखी और शक्की होती है।

इस बातके बतानेकी कोई खास आवश्यकता नहीं है कि प्रायः (कभी कभी कल्पित) आध्यात्मिकताका विकाश बुद्धिकी पूर्ण उपेक्षाके साथ किया गया है। बहुत समय व्यतीत नहीं हुआ, जब कि 'कट्टर धर्मात्मा' लोग विद्या और ज्ञानको धोखा और जाल कहकर उनका तिरस्कार करना एक बड़ी धार्मिक तथा ईश्वरीय बात समझते थे। ऐसे आदमियोंके हृदयोंमें सबसे महत्त्वपूर्ण जो बात थी और जिसको वे अपनेसे मिलनेवाले हरएक आदमीके हृदयपर अंकित कर देना चाहते थे, वह मुक्ति प्राप्त करना था। पुरुष तथा स्त्रियाँ भावों तथा जोशसे अभिभूत होकर यह गाया करते थे कि संसारमें कोई भी वस्तु विचारके योग्य नहीं है सिवाय इसके कि मैं उस मृत्युसे कैसे बच सकता हूँ, जो कभी मरती ही नहीं।

यह अच्छी बात है कि इस प्रकारकी शिक्षाका शीघ्रताके साथ लोप होता जा रहा है। अच्छा होता कि यह शिक्षा और भी तेज़ीके साथ लुप्त हो जाती। कारण कि ऊपरकी बात चाहे जितने भी साधारण ढँगसे क्यों न कही गई हो, वह उतनी ही बनावटी तथा लज्जित करनेवाली है जितनी कि वह योग्य गवैयोंद्वारा बहुत ही अच्छे स्वरसे मन्दिरोंमें गाये जानेपर होती। इससे किसीके हृदयमें ये शब्द याद आ सकते हैं कि क्या स्वार्थ, जो कि समयपर पाप है, और जो सदा ही त्याज्य बताया गया है, स्वर्गीय बुद्धिमानी है?

कुछ आदमियोंने ऐसे स्त्री-पुरुषोंको कभी न कभी अवश्य देखा होगा जो कि शारीरिक पुष्टको बलिदान करके आध्यात्मिक संस्कारको विकसित करते हैं। वे सब विषय-वासनाओं तथा भावोंको पाप समझकर दमन करते हैं और इस तरहसे अपने आपको पवित्र, संयत और परिवर्तित करनेके स्थानपर मारते हैं, अपनी कायाको क्लेश पहुँचाते हैं और अपने आपको नष्ट कर

डालते हैं। यदि शरीर इन्द्रियोंके होते हुए भी एक पापमय वस्तु बन गई है, तो निसन्देह स्वयं हमने ही उसे ऐसा बनाया है।

आध्यात्मिक जीवनकी प्राप्तिके वास्ते बहुतसे स्त्री-पुरुष जन-समूहको छोड़कर जंगलमें रहते हैं, अपनी प्रेम-प्रकृतिको दबाते हैं, मित्रता तथा सहानुभूतिसे अपने आपको वञ्चित रखते हैं और आदमियोंके रहनेके स्थानोंसे दूर भागते हैं। निश्चयसे यह एक-तरफ़ा और असमान व्यवहार है। अति कहीं भी अच्छी नहीं होती। एक अतिवादीमें सदा निस्बतकी कमी होती है, वह सदा एक तरफ़को झुका हुआ होता है और तुला हुआ नहीं होता। वास्तविक आध्यात्मिकतामें शरीर तथा बुद्धिका भी समावेश है और वह आदमी इनको पवित्र, उच्च, श्रेष्ठ और उन्नत बनाता हुआ परमात्मीय पद तक पहुँच जाता है।

इस लिए प्रिय पाठको, सर्वांग उन्नति करने और सभी प्राकृतिक शक्तियोंको पुष्ट करनेका प्रयत्न करो। किसी भी दशामें अति न करते हुए, यथाशक्ति समस्त उपायोंको काममें लाते हुए एक सुन्दर दृढ, और पूर्ण पुरुषत्व या स्त्रीत्व प्राप्त करनेका प्रति दिन प्रयत्न करो। यह एक भली प्रकार ऊँचा तुला और सुन्दर चरित्र ही है। शारीरिक, मस्तिष्कीय, तथा आध्यात्मिक दशाओंमें सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वोच्च स्थान प्राप्त करना तुम्हारा उद्देश्य होना चाहिए।

व्यक्तित्व-प्राप्तिका यही राजमार्ग है।

८—मनन और ध्यान ।

" बुद्धिमान् आदमी विचारको विचारसे और कामको कामसे सुरीतिसे मिलाकर अपने चरित्रका निर्माण करता है । थोड़ा थोड़ा करके वह अपने उद्देश्योंको प्राप्त कर लेता है । ऐसा आदमी पूर्ण शांतिके साथ अच्छी तरहसे काम करता है ।"

" सच्चे मननसे जीवनरूपी समुद्रकी गहराईको और प्रेम तथा ज्ञानकी ऊँची चोटियोंको मापो । जिस आदमीको मननके मार्गका पता नहीं है, वह मुक्ति और प्रकाशको प्राप्त नहीं कर सकता । "

" परन्तु तुम विचारका पवित्र मार्ग प्राप्त कर लोगे । "

—जेम्स एलन

किसी वस्तुका मनन करना उस वस्तुके समान ही बन जाना है । आदमीके लिए मननसे सब कुछ प्राप्त करना सम्भव है । इस पुस्तकके पाठकोंने अब तक विचारकी महत्ताको समझ लिया होगा और समझ लिया होगा कि विचारसे ही आदमी उन्नत अथवा पतित होता है । किसी गुणका बार बार विचार करनेसे एक दिन वह गुण प्राप्त हो ही जाता है और किसी पापका विचार करनेसे एक न एक दिन आदमी उस पापमें फँस ही जाता है । इस लिए यह बात आसानीसे समझ ली जायगी कि हम मननको, प्रस्तुत विषयपर नियमित और लगातार मननको, नहीं छोड़ सकते । कुछ पाठक प्रति दिनके कुछ भागको मननके लिए नियत करनेकी आवश्यकता अनुभव करेंगे । यह एक बहुत अच्छी तजवीज़ है और नियत समयपर मनन करनेमें कोई भी विघ्न-बाधा न आनी देनी चाहिए । दूसरे आदमी उच्च तथा श्रेष्ठ विषयोंका चिन्तन करनेके लिए अपने हृदयोंको इतना उत्सुक पायेंगे कि उनके लिए दिनके किसी भागको मनन करनेके लिए नियत करना कठिनतासे आवश्यक होगा; कारण कि उनके मन उन विषयोंपर चिन्तवन करनेके प्रत्येक अवसरको काममें लायेंगे । निस्सन्देह मनको एकदम इच्छानुसार मनन करनेके लिए सधाना इससे कहीं

अधिक अच्छा है कि मनको नियत समयपर मनन करनेके लिए विवश किया जाय। बहुतसे आदमियोंने प्रातःकालको मनन करनेके लिए सुन्दर समय समझा है; परन्तु क्या यह समय दिन या रातके किसी दूसरे समयसे अधिक सुन्दर है ? जब मन उन वस्तुओंका मनन करनेकी अच्छाई और पवित्रताको समझ लेता है, जिन्हें हम जीवन तथा शांति, और सफलता तथा प्राप्ति कहते हैं, तब उसे मनन करनेके लिए विवश करनेकी जरूरत ही न रहेगी। वह स्वयं इस काममें लग जायगा।

मनन वह चाबी है, जिससे हम स्वर्गके दरवाजे खोलते हैं। मननमें सदा एकाग्रता अथवा ध्यान जमानेपर लक्ष्य रक्खो। अपने विचारको सच्चा, दृढ, अटल, स्थिर तथा गम्भीर बनाओ। तुम्हारे विचार जितने ही एकाग्र होंगे, उतनी ही अधिक शीघ्रतासे तुम्हें अपने काममें सफलता प्राप्त होगी।

इस बातको याद रक्खो कि आत्माद्वारा कभी ऐसे उद्देश्यकी कल्पना नहीं होती, जिसे वह प्राप्त न कर सके। आनन्दकी कोई ऐसी अवस्था नहीं, जिसे हृदय अनुभव न कर सके। जीवनकी जिस किसी शक्तिका विचार किया जा सकता है, वह अप्राप्य नहीं है। यही राजमार्ग है। आओ प्रिय पाठको, इसपर चलें और अपने जीवनके उद्देश्यको—एक दृढ और प्रभावशाली व्यक्तित्वको—प्राप्त करें।

समाप्त